भारतीय ग्रन्थमाला; संख्या १४

ब्रिटिश साम्राज्य शासन

दयाशंकर दुबे
भगवानदास केला

भारतीय ग्रन्थमाला; संख्या १४

British Samraj Shastra

ब्रिटिश साम्राज्य शासन

लेखक

Dya Shankar Dubi

दयाशंकर दुबे, एम० ए०, एल-एल० बी०

अर्थशास्त्र-अध्यापक, प्रयाग विश्वविद्यालय

और

भगवानदास केला

रचयिता, भारतीय शासन, देशी राज्य शासन, आदि

प्रकाशक

व्यवस्थापक, भारतीय ग्रन्थमाला, बृन्दावन ।

1943

द्वितीय संस्करण } सन् १६४३ ई० { मूल्य, एक रुपया

प्रकाशक
भगवानदास केला
व्यवस्थापक
भारतीय ग्रन्थमाला
बुन्दाबन

मुद्रक
गयाप्रसाद तिवारी
बी० काम,
नारायण प्रेस,
प्रयाग।

निवेदन

चौदह वर्ष बाद हिन्दी संसार ने हमें इस पुस्तक के दूसरे संस्करण प्रकाशित करने का अवसर प्रदान किया; यह बात उन हिन्दी-प्रेमियों के लिए बहुत विचारणीय है, जो इस भाषा के सभी आवश्यक और उपयोगी अंगों की जल्दी-से-जल्दी पूर्ति करने के लिए व्याकुल रहते हैं। तथापि हम उन विद्यानुरागी पाठकों की अवहेलना करना नहीं चाहते —चाहे वे कितनी ही कम संख्या में हों—जो ऐसे साहित्य का स्वागत करते हैं। उनकी आवश्यकता के विचार से ही, परिस्थितियाँ बहुत प्रतिकूल होते हुए भी, यह दूसरा संस्करण प्रस्तुत किया जा रहा है। हमारी बहुत इच्छा थी कि पुस्तक का क्षेत्र बढ़ाकर इसमें अन्य प्रमुख राज्यों की, विशेषतया अमरीका और रूस की शासनपद्धति का समावेश कर दिया जाय। परन्तु कागज की महँगायी और दुर्लभता की अवस्था में यह पुस्तक वर्तमान रूप में भी छप सकी, यही गनीमत है।

पुस्तक में आवश्यक संशोधन कर दिया गया है। मितव्ययिता के विचार से भारतवर्ष की शासनपद्धति इसमें नहीं दी गयी है (इसके लिए हमारी 'भारतीय शासन' विद्यमान है)। 'स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश और ब्रिटिश सरकार' एक स्वतंत्र परिच्छेद बढ़ाया गया है, तथा आयर (आयर्लैंड) के नये विधान का विस्तार से वर्णन किया गया है; और भी कई विषयों को यथा-सम्भव स्पष्ट कर दिया गया है। आशा है, पाठक इससे यथेष्ट लाभ उठाएँगे।

विनीत

भगवानदास केला

भूमिका

शासनपद्धति और राजनैतिक संस्थाओं के विद्यार्थियों का, अंगरेजी शासनपद्धति अध्ययन किये बिना काम नहीं चलता। भारतीय विद्यार्थियों के लिए तो इस विषय के स्वाध्याय का विशेष ही महत्व है। आधुनिक काल की बहुत सी राजनैतिक संस्थाओं को अपने कार्य-क्रम की प्रेरणा, वह अच्छी हो या बुरी, अंगरेजी शासनपद्धति के उदाहरणों और व्यवहारों से हुई है। हमारी राजनीति की दिशा चाहे जो हो, कम-से-कम अगली पीढ़ी के लिए अंगरेजी शासनपद्धति के दृष्टान्त हमारे प्रधान पथ-प्रदर्शक रहेंगे। इसलिए मुझे विश्वास है कि इस विषय की सरल सुबोध हिन्दी की रचना को सर्वसाधारण, और विशेषतया अंगरेजी न जानने वाले, बहुत पसन्द करेंगे।

अङ्गरेजी शासनपद्धति अध्ययन करलेनेवाले इस विषय की कठिनाइयों और उलझनों को भली भांति जानते हैं। यह शासन-पद्धति अन्य शासनपद्धतियों से बहुत ही भिन्न है। इसका कोई एक लिखित विधान न होने के कारण, इसकी वृद्धि की विविध मंजिलों का पता लगाना और इसके महत्व की यथेष्ट कल्पना करना कठिन है। इसका क्रमशः विकास हुआ है, इस लिए इसमें कई ऐसी बेमेल बातें हैं, जिनका, इतिहास जाने बिना, समझना कठिन है; और इसकी कई प्रथाएँ ऐसी हैं, जिनकी अब उपयोगिता नहीं रही है। इसके बहुत-से अंश का किसी कानून की पुस्तक में समावेश नहीं है; इसका अध्ययन उन प्रचलित रीतियों और व्यवहारों का ज्ञान प्राप्त करके ही

किया जा सकता है, जिनका प्रभाव कानून से स्वीकृत न होने पर भी, कानून के समान है।

अङ्गरेजी शासनपद्धति अध्ययन करने वालों को इसकी वे तीन विशेषताएँ ध्यान में रख लेना उपयोगी होगा, जिन पर शासनपद्धति के बड़े-बड़े लेखकों ने जोर दिया है :—

(क) इंगलैन्ड की पार्लिमेंट की प्रभुता निराली है। संसार की कोई व्यवस्थापक संस्था ऐसी सर्वशक्ति-सम्पन्न नहीं है। ब्रिटिश पार्लिमेंट दोनों कार्य कर सकती है; यह शासनपद्धति को भी बदल सकती है, और कानून भी बना सकती है।

(ख) यहाँ सब पर कानून का राज्य है। कानून के सामने सब नागरिक समान है। शासकों के लिए यहाँ विशेष न्यायालय नहीं हैं। 'हेबियस कोर्पस एक्ट' व्यक्तियों की सरकारी कर्मचारियों से रक्षा करता है। भाषण, सम्मेलन, और लेखन-कार्य की स्वतत्रता यहाँ किसी कानून से नहीं है, यह तो लोगों का जन्मसिद्ध अधिकार है। इसलिए इसका सम्मान भी बहुत अधिक है।

(ग) यहाँ कानून की अपेक्षा, प्रथाओं का महत्व अधिक है। उनके कारण कानून की वास्तविकता बहुत कम होगयी है। उन्होंने इंगलैंड की राजनैतिक संस्थाओं की शान्तिपूर्वक उन्नति करने में महत्त्वपूर्ण भाग लिया है। वे इस बात की द्योतक हैं कि अंगरेज जाति में अपने आपको, राजनैतिक जीवन की बदलती हुई स्थिति के अनुकूल बनाने की अद्भुत क्षमता है।

अंगरेजी शासनपद्धति की ब्यौरेवार बातों का अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाठकों को यह पुस्तक अवलोकन करनी चाहिए। मैंने यहाँ पर केवल उस कार्य की कठिनाइयों का दिग्दर्शन कराने का

प्रयत्न किया है, जिसका भार श्री० दयाशंकरजी दुबे और श्री० भगवानदास जी केला ने लिया और जिसे इन्होंने ऐसी सफलता-पूर्वक पूरा किया। मुझे निश्चय है कि हिन्दी जाननेवाली जनता इस पुस्तक से, अधिक-से-अधिक लाभ उठाएगी। हिन्दी का राजनैतिक साहित्य श्री० केला जी का बहुत ऋणी है, और उनकी इस रचना से हम उनके और अधिक कृतज्ञ होगये हैं। स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों आदि की भिन्न-भिन्न शासनपद्धतियों के परिच्छेदों से पुस्तक की उपयोगिता बढ़ गयी है। इससे पाठकों को उन संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर मिलेगा, जो अंगरेजी शासनपद्धति के आधार पर संगठित हुई हैं, या जो अपने कार्यक्रम में उससे प्रेरित हुई हैं। भारतवर्ष की भावी शासनपद्धति में अनुराग रखने वालों को अपने निर्णयों पर पहुँचने के लिए इस पुस्तक में बहुत उपयोगी सामग्री मिलेगी।

हिन्दी में ऐसी पुस्तकों का प्रायः अभाव ही है, जिनमें इस विषय का ऐसा विशद विवेचन हो। हिन्दी जाननेवाली जनता को इस पुस्तक के लेखकों के श्रम और योग्यता के लिए बहुत कृतज्ञ होना चाहिए।

जुगलकिशोर, एम. ए.
भूतपूर्व आचार्य
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दाबन।

विषय-सूची

प्रथम खंड

ग्रेट-ब्रिटेन तथा उत्तरी आयलैंड का शासन

द्वितीय-खंड

ब्रिटिश साम्राज्य के अन्य भागों का शासन

प्रथम खंड

ग्रेट-ब्रिटेन तथा उत्तरी आयर्लैंड का शासन

पहला परिच्छेद

विषय प्रवेश

शासन सम्बन्धी ज्ञान का महत्व—एक भारतीय विद्वान् का कथन है कि सब धर्मों का प्रवेश राज-धर्म में हो जाता है। आज-कल इस कथन की सत्यता. थोड़ा विचार करने पर, भली भांति ज्ञात हो सकती है। प्रत्येक देश की आर्थिक, सामाजिक या धार्मिक उन्नति के विविध कार्य, प्रत्यक्ष या गौण रूप से राजनीति से सम्बन्ध रखते हैं। नागरिक जीवन की रोजमर्रा की बहुत सी बातें ऐसी होती हैं जिनमें, उनके देश की शासनपद्धति, अनुकूल होने से बहुत सहायक हो सकती है, और प्रतिकूल होने से, वह बहुत बाधक भी बन सकती है। किसी नागरिक का यह कहना ठीक नहीं है कि हम राजनीति में भाग नहीं लेते। सरकार के बनाये हुए कानूनों पर उन्हें अमल करना ही पड़ता है। सरकारी कर (टेक्स) उन्हें देने ही होते हैं, अपने भले या बुरे व्यवहार से, चाहे अप्रकट रूप में ही क्यों न हो, वे सरकार को शासन सम्बन्धी नये नियमों के निर्माण के लिए, अथवा पुराने

कानूनों के परिवर्तन या संशोधन के लिए प्रेरित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक नागरिक, किसी-न-किसी अंश में, राजनीति से सम्बन्ध अवश्य रखता है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक नागरिक, पुरुष हो या स्त्री, युवक हो या वृद्ध, शासन सम्बन्धी विषयों का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करे, और, उन्हें भली भांति अध्ययन और मनन करे, जिससे वह इस दिशा में अपने कर्तव्यों का उचित रीति से पालन कर सके।

ब्रिटिश साम्राज्य का शासन जानने की आवश्यकता— अपने ही देश की नहीं, हमें भिन्न-भिन्न देशों की शासनपद्धतियों का ज्ञान होना चाहिए। इससे हम यह सोच सकेंगे कि किस शासनपद्धति का कौनसा नियम ऐसा है, जिसके, हमारे देश में प्रचलित हो जाने से हमारा कल्याण होगा, तथा, कौनसे नियमों का अनुकरण हमारे देश के लिए अहितकर होगा। यदि अवकाश के अभाव से हम बहुत से देशों की शासनपद्धतियों का ज्ञान प्राप्त न कर सकें, तो कम से-कम ऐसे देशों के विषय में तो हमें अवश्य ही ज्ञान होना चाहिए जिनसे हमारा घनिष्ट सम्बन्ध है या जिनकी शासनपद्धति का प्रभाव हमारे देश की शासनपद्धति पर बहुत अधिक पड़ता है।

उदाहरण के लिए, पाठक जानते हैं कि वर्तमान अवस्था में भारतवर्ष ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत है। इंगलैंड का बादशाह यहाँ का सम्राट् कहलाता है। वहाँ की पार्लिमेंट द्वारा स्थिर की हुई शासन-नीति ब्रिटिश भारत में प्रचलित है, तथा उस पार्लिमेंट को हमारी देशी रियासतों पर भी महत्वपूर्ण अधिकार है। भारतवर्ष की शासनपद्धति ब्रिटिश साम्राज्य के स्वाधीन उपनिवेशों की शैली पर संशोधित की जा रही है। साम्राज्य के पराधीन भागों से भी भारतवर्ष का बहुत सम्बन्ध है; उनके कई स्थानों में तो कितने ही

भारतीय निवास करते हैं, तथा कुछ वहाँ जाते-आते रहते हैं। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य के सभी भागों से हमारा सम्बन्ध है, और उन सबकी शासनपद्धति का ज्ञान प्राप्त करना हमारे लिए उपयोगी तथा आवश्यक है।

साम्राज्य का मातृ-देश—पहले इस साम्राज्य के मातृ-देश की शासनपद्धति जान लेनी चाहिए। इस पुस्तक के प्रथम खंड में इसका ही वर्णन किया जायगा। ब्रिटिश साम्राज्य के मातृ-देश में ग्रेट-ब्रिटेन (इंगलैंड, वेल्ज़, स्काटलैंड) और उत्तरी आयर्लैंड, तथा मानद्वीप और खाड़ी के द्वीप सम्मिलित हैं। इसे 'ब्रिटिश संयुक्त राज्य' भी कहते हैं। साधारण बोलचाल में इंगलैंड कहने से भी इस सब भू-भाग का आशय लिया जाता है। साधारण आदमियों की यह धारणा होती है कि ब्रिटिश संयुक्त राज्य कोई बहुत बड़ा राज्य होगा, परन्तु वास्तव में यह बात नहीं है। क्षेत्रफल और जनसंख्या के दृष्टि से ब्रिटिश संयुक्त राज्य बहुत साधारण सा, भारतवर्ष के संयुक्तप्रांत से भी छोटा, राज्य है। इसका क्षेत्रफल लगभग ९४ हजार वर्गमील और जनसंख्या लगभग पाँच करोड़ है।

योरप महाद्वीप के पश्चिम भाग में चहुँ ओर समुद्र से सुरक्षित, ग्रेट-ब्रिटेन एक टापू है। इसके दक्षिण भाग में इंगलैंड और वेल्ज़ है, तथा उत्तर भाग में कुछ ऊँचे पहाड़ों से परे स्काटलैंड है। उत्तरी आयर्लैंड के भी कई ओर जल ही है। इन भागों का, विशेषतया इंगलैंड का, किनारा काफी कटा हुआ है। यहाँ बन्दरगाह बहुत उत्तम हैं। नदियों की गति भी साधारणतः जहाज़ों के जाने-आने के लिए बहुत अनुकूल है।

ब्रिटिश संयुक्त राज्य योरप, अमरीका और अफ्रीका के बीच में

ऐसे मौके की जगह पर स्थित है कि भिन्न-भिन्न देशों का व्यापारिक माल इस राज्य के पास से गुजरता है, और सब जगहों का माल यहाँ सुगमता से आ सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह राज्य समुद्रों के चौराहे पर है। इन कारणों से इस राज्य के निवासियों को संसार के भिन्न-भिन्न देशों से व्यापार करके लाभ उठाने की बड़ी सुविधा मिली है। इस राज्य की भौगोलिक स्थिति ब्रिटिश साम्राज्य के निर्म्माण में भी बहुत सहायक हुई है; इसका विशेष विचार आगे, प्रसंगानुसार किया जायगा।

दूसरा परिच्छेद

ऐतिहासिक परिचय

ब्रिटिश साम्राज्य के मातृ-देश—इंगलैंड, वेल्ज, स्काटलैंड और उत्तरी आयर्लैंड—की शासनपद्धति का वर्णन आरम्भ करने से पूर्व हमें यह विचार कर लेना चाहिए कि इस राज्य के भिन्न-भिन्न भाग कब और किस प्रकार परस्पर में मिले। पहले इंगलैंड को लेते हैं।

इंगलैण्ड का एकीकरण—अंगरेज़ों का इतिहास पाँच-दस हज़ार वर्ष का नहीं है। यह डेढ़ हज़ार वर्ष से भी कम का है। उससे पहले अंगरेज़ जाति नहीं थी; इंगलैण्ड के मूल निवासी 'ब्रिटन' कहलाते थे। उन पर रोम वालों का राज्य था। रोम वालों ने ईसा से ५५ वर्ष पहले वहाँ राज्य करना आरम्भ किया था और लगभग साढ़े

चार सौ वर्ष राज्य किया; उन्होंने ब्रिटनों की बहुत-कुछ उन्नति की, परन्तु उन्हें सदैव परावलम्बी बनाकर रखा, आत्म-रक्षा के लिए शस्त्र रखने की अनुमति नहीं दी। इसका परिणाम यह हुआ कि जब पाँचवीं सदी में रोम पर उत्तरी योरप की असभ्य जातियों ने आक्रमण किया और इंगलैण्ड में रहनेवाले रोमन लोग अपने देश में लौट आये, तो बेचारे ब्रिटन असहाय रह गये। सन् ४४६ ई० में इस समय 'जर्मनी' कहे जाने वाले देश की ऐल्ब नदी के किनारे के पास की भूमि से,'ज्यूट' लोगों ने आकर प्रथम वार इंगलैण्ड के कुछ भाग पर अधिकार कर लिया। पीछे क्रमशः 'ऐंगल' और सेक्सन लोग आते गये और भिन्न-भिन्न भागोंपर अधिकार करके अलग-अलग राज्यों की स्थापना करने लगे। उपर्युक्त तीन जातियों के आदमी कुछ समय परस्पर में लड़ते-भिड़ते रहे। आठवीं शताब्दी तक इनके सात पृथक्-पृथक् राज्य थे। अन्त में, सन् ८२७ ई० में एग्वर्ट नामक बादशाह समस्त इंगलैण्ड में सर्वोच्च अधिकारी मान लिया गया। यद्यपि उस समय भी कई भागों में पृथक्-पृथक् बादशाह थे, उस समय से इंगलैण्ड एक राज्य समझा जाने लगा। 'इंगलैण्ड' शब्द 'ऐंग्लों की भूमि' का द्योतक है।

अंगरेज़ या ऐंग्लो-सेक्सन जाति—नवीं शताब्दी में डेनमार्क (और नार्वे) से आकर 'डेन' लोगों ने इंगलैंड पर आक्रमण किया, और अन्ततः सन्धि करके कुछ भाग में अपना राज्य स्थापित कर लिया। पीछे ग्यारहवीं शताब्दी में 'नार्मन' लोग इंगलैंड पर आक्रमण करने लगे। नार्मंडी (फ्रांस) के ड्यूक विलयम ने यहाँ १०६६ में विजय प्राप्त की, और सब भूमि पर अधिकार कर लिया; वह बादशाह बन गया। इस घटना से, तथा इसके पश्चात्, नार्मन लोगों की अच्छी संख्या इंगलैंड में आगयी और यहाँ निवास करने लगी। ये

लोग उसी जाति के थे, जिसके, पूर्वोक्त डेन लोग थे। बादशाह से ज़मीन पाकर ये बड़े-बड़े सरदार बन गये। इंगलैंड के वर्तमान सरदार घरानों के आदमी प्रायः इन ही के वंशज हैं।

उपर्युक्त सब जातियों—ज्यूट, ऐंगल, सेक्सन, डेन और नार्मन—के परस्पर मिलजाने से अंगरेज़ (इंगलिश) जाति बनी हैं। इसे ऐंग्लो-सेक्सन भी कहते हैं; वास्तव में यह शब्द आरम्भ में आई हुई ऐंगल और सेक्सन जातियों के संयोग का द्योतक है। नार्मनों के बाद इंगलैंड किसी विदेशी जाति के अधिकार में नहीं आया।

वेल्ज़ की विजय—जब ब्रिटनों पर सेक्सन आदि जातियों के आक्रमण हुए तो उनमें से कुछ तो खाड़ी पार करके 'गाल' (फ्रांस) चले गये थे और कुछ ने वेल्ज़ के जंगलों में शरण ली थी। वेल्ज़ में अब भी उन प्राचीन ब्रिटनों के वंशज रहते हैं, ये अभी तक अपनी पुरानी भाषा का भी व्यवहार करते हैं। अस्तु, तेरहवीं सदी के अन्त में वेल्ज़ को विजय करके इंगलैण्ड के राज्य में मिला लिया गया। तब से इंगलैण्ड के बादशाह का बड़ा लड़का 'वेल्ज़ का राजकुमार' या प्रिंस-आफ़-वेल्ज़ कहलाता है। वर्तमान महायुद्ध के पहले तक वेल्ज़ के लिए स्वतंत्र पार्लिमेंट स्थापित करने का आन्दोलन चल रहा था।

स्काटलैण्ड का मेल—इंगलैण्ड और स्काटलैण्ड के बीच में ऊंचे पहाड़ होने से, आरम्भ में बहुत समय तक, इन देशों में पारस्परिक सम्बन्ध बहुत कम रहा। कई बार इस बात का यत्न किया गया कि ये दोनों राज्य मिल जायँ। सन् १६०३ ई० में इंगलैण्ड की महारानी ऐलिज़बेथ का देहान्त होजाने पर, स्काटलैंड का बादशाह ही निकटतम उत्तराधिकारी होने के कारण, इंगलैण्ड का भी बादशाह बना। स्काटलैण्ड में वह 'जेम्स षष्ठम' कहलाता था, इंगलैण्ड में उसका

नाम 'जेम्स प्रथम' रहा। इस प्रकार दोनों राज्यों का एक ही बादशाह होगया, परन्तु दोनों की शासन-व्यवस्था तथा क़ानून पृथक्-पृथक् रहे। क्रमशः इस नीति की हानियाँ विदित होती गयीं, तथापि दोनों राज्यों में पारस्परिक मनोमालिन्य रहने के कारण, इनका एकीकरण न हो सका। अन्ततः सन् १७०७ ई० के क़ानून से दोनों राज्य मिलाये गये। दोनों की नयी सम्मिलित पार्लिमेन्ट का नाम 'ब्रिटिश पार्लिमेंट' होगया; हाँ, क़ानून-पद्धति पृथक्-पृथक् रही। स्काटलैंड में भी वेल्ज़ की तरह, वर्तमान महायुद्ध आरम्भ होने से पहले, स्वतंत्र पार्लिमेंट स्थापित करने का आन्दोलन चल रहा था।

अस्तु, यह स्पष्ट है कि इंगलैंड और स्काटलैण्ड को परस्पर में मिले, अभी ढाई सौ वर्ष भी नहीं हुए। इन दोनों भू-भागों का संयुक्त नाम 'ग्रेट ब्रिटेन' है। 'ग्रेट' का अर्थ बड़ा या महान् है।

उत्तरी आयर्लैण्ड—ग्रेट-ब्रिटेन और आयर्लैण्ड एक दूसरे से पृथक् भू-भाग हैं। इन दोनों के बीच में आयरिश सागर है, अतः आरम्भ में बहुत समय तक, इन दोनों में समागम कम रहा। इसके अतिरिक्त इंगलैण्ड आयर्लैण्ड को अपने से छोटे दर्जे का मानता था। उसने महारानी ऐलिजबेथ के समय में उसे विजय कर लिया। पश्चात् सन् १७१६ ई० में ब्रिटिश पार्लिमेंट ने उसके लिए कानून बनाने के सम्बन्ध में अपने अधिकार की घोषणा की, परन्तु दोनों राज्यों के परस्परिक झगड़ों के कारण ये अलग-अलग ही रहे। सन् १७८२ ई० में आयर्लैंड की पार्लिमेन्ट स्वतन्त्र हो गयी। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक वह राज्य अपना शासन स्वयं करता रहा। सन् १८०१ ई० में आयर्लैण्ड की अलग पार्लिमेन्ट रहनी बन्द हो गयी और वह ग्रेट-ब्रिटेन की पार्लिमेन्ट में मिल गयी। उसी में आयर्लैंड के

प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित कर दी गयी। दोनों राज्योंका बादशाह भी एक ही होने लगा। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में तथा बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में वहां 'होम-रूल' आन्दोलन होता रहा, जिससे अन्तत: सन् १९१४—१८ के महायुद्ध के पश्चात्, केवल उत्तरी आयर्लैंड की पार्लिमेंट ही ब्रिटिश पार्लिमेन्ट के अधीन रही और शेष आयर्लैंड का 'आयरिश फ्री स्टेट' के नाम से एक पृथक् राज्य हो गया। इस राज्य का विशेष उल्लेख अन्यत्र किया जायगा।

अस्तु, इस विवेचन से यह ज्ञात हो गया कि ब्रिटिश संयुक्त राज्य के भिन्न-भिन्न भाग किस प्रकार मिलकर, एक राज्य स्थापित हुआ। अगले परिच्छेद से हम इस राज्य की शासनपद्धति का वर्णन आरम्भ करेंगे।

तीसरा परिच्छेद

अंगरेजी शासनपद्धति की विशेषताएँ

फ्रांस के लोग सुधार न कर राज्य-क्रान्ति किया करते हैं, और इंगलैण्ड के आदमी राज्य-क्रान्ति न कर सुधार किया करते हैं।

—नेपोलियन तृतीय

किसी-किसी देश की शासनपद्धति में कुछ बातें ऐसी होती हैं, जो प्रायः अन्य देशों की शासनपद्धतियों में नहीं पायी जातीं। जिस देश में ऐसा हो, उसकी शासनपद्धति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन बातों को भली भांति समझ लेना उचित है। इंगलैंड की

शासनपद्धति में ऐसी दो बातें हैं, जिन्हें हम उसकी विशेषताएँ कह सकते हैं।

अंगरेज़ी शासनपद्धति की विशेषताएँ— (१) यद्यपि प्रकट रूप से समस्त शासन-कार्य बादशाह के नाम से होता है, पर वास्तव में बादशाह अपनी इच्छा के अनुसार कुछ नहीं करता। कानून बनाने, शासन करने, तथा न्याय-सम्पादन के लिए, अंगरेज़ी शासनपद्धति के अनुसार पार्लिमेन्ट, मन्त्रिमंडल तथा न्याय-संस्था उत्तरदायी हैं, और, बादशाह केवल इन संस्थाओं के आदेशानुसार काम करता है।

अंगरेज़ी शासनपद्धति का एक सिद्धान्त यह है कि बादशाह ग़लती नहीं कर सकता। इसका अभिप्रायः यह है कि वह किसी भी राज्य-कार्य का उत्तरदाता नहीं माना जाता। सब कार्यों के उत्तरदाता मंत्री ही होते हैं, और उनकी सम्मति के अनुसार ही बादशाह काम करता है। हाँ, बादशाह एक काम अपनी इच्छा के अनुसार करता है, वह काम है, प्रधान मंत्री का चुनाव। परन्तु इसकार्य की भी सीमा परिमित रहती है। बादशाह को इस पद के लिए ऐसा व्यक्ति चुनना होता है जो जनसाधारण सभा के अधिकांश सदस्यों को अपनी नीति के पक्ष में रख सके; ऐसे व्यक्ति सदैव इनेगिने ही होते हैं।

(२) अंगरेज़ी शासनपद्धति की दूसरी विशेषता यह है कि यद्यपि उसके कुछ नियम ऐसे भी हैं जिन्हें इंगलैण्ड की जनसाधारण-सभा ने बनाया है, उसके अधिकांश नियम इस प्रकार के हैं जो, किसी ख़ास समय में इस सभा द्वारा नहीं बनाये गये; ये रीति-रिवाज पर निर्भर हैं और इनके अनुसार वहाँ परम्परा से काम होता आ रहा है। देश के लिपि-बद्ध क़ानून में उनका समावेश नहीं है। इसका

कारण यह है कि इंगलैंड के प्रतिनिधि तथा अन्य अधिकारी किसी ख़ास समय यह निश्चय करके नहीं बैठे कि आओ अपने देश के राजप्रबन्ध के लिए अमुक-अमुक विषय के क़ानून बनावें, अब से इस देश का शासन इस नयी पद्धति के अनुसार होना चाहिए। अंगरेज़ी शासनपद्धति के उपर्युक्त नियमों को अपने वर्तमान रूप में आने के लिए यथेष्ट समय लगा है। इस प्रकार अंगरेज़ी शासनपद्धति का क्रमशः, धीरे-धीरे विकास हुआ है, इसकी स्वाभाविक वृद्धि हुई है। इसलिए आवश्यकता होने पर इसमें परिवर्तन भी आसानी से हो सकता है, उसके लिए घोर आन्दोलन नहीं करना पड़ता।

शासनपद्धति की परिवर्तनशीलता—इसीलिए यहाँ की शासनपद्धति को परिवर्तनशील कहा जाता है। यह अमरीका आदि देशों की शासनपद्धतियों की भांति अपरिवर्तनशील नहीं है। यहाँ शासनपद्धति सम्बन्धी नियमों में सुधार करने के लिए विशेष बन्धन नहीं है। मंत्रिमंडल आवश्यकतानुसार उसके संशोधन का प्रस्ताव कर सकता है। इससे उसमें एक-दम महान परिवर्तन होना, तथा उसका रूपान्तर भी होजाना असम्भव नहीं है। हाँ, यह केवल सिद्धान्त की बात रही। व्यवहार में, मंत्रिमंडल या पार्लिमेंट लोकमत से आगे नहीं बढ़ सकती, और लोकमत प्रायः सहसा नहीं बदलता।

अस्तु, मंत्रिमंडल के प्रस्तावों के अतिरिक्त, न्यायालयों के निर्णय भी यहां शासनपद्धति बदलने में सहायक होते हैं। पार्लिमेंट के बनाये हुए क़ानूनों का अर्थ लगाने में मतभेद उपस्थित होने की दशा में उसका निर्णय न्यायालय करते हैं। इससे उन क़ानूनों पर न्यायालयों के निर्णयों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। इस प्रकार शासनपद्धति में धीरे-धीरे परिवर्तन हुआ करते हैं, जो बहुधा

उस समय तो कुछ विशेष महत्व के मालूम नहीं होते परन्तु कालान्तर में उनसे किसी-किसी विषय का कायापलट सा ही होजाता है।

शासनपद्धति की परिवर्तनशीलता से इंगलैंड को एक बड़ा लाभ यह है कि यहाँ जनता की इच्छानुसार सुधार होने की सम्भावना बनी रहती है, इससे जनसाधारण को प्राय: क्रान्ति की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। उन्होंने समझ लिया है कि जैसा लोकमत होगा, वैसा नियम पार्लिमेन्ट में बन जायगा। इसलिए वे जब जैसा क़ानून बनवाना चाहते हैं, उसके अनुसार लोकमत तैयार करने तथा जनता को शिक्षित करने में लग जाते हैं। यदि वे ऐसा करने में सफल न हों, अर्थात् वे लोगों को अपने अभीष्ट नियम की उपयोगिता न समझा सकें तो वे जान लेते हैं कि उस विषय की क्रान्ति करने में जनता हमारे साथ न होगी, और इसलिए क्रान्तिकारी उपायों से भी सफलता न होगी। यही कारण है कि इंगलैण्ड के इतिहास में यह बात ख़ास तौर से देखने में आती है कि यह देश राजनैतिक क्रान्तियों और उथल-पुथल के झगड़ों से प्रायः मुक्त रहा है। वास्तव में इंगलैंड की शासनपद्धति का इतिहास बादशाह की शक्ति कम होकर, उस शक्ति के, प्रजा के हाथ में जाने का इतिहास है। और, यह कार्य क्रमशः प्रायः मंज़िल-दर-मंज़िल, और अधिकांश में बिना खून बहाये, हुआ है।

यह शासनपद्धति अलिखित है—अमरीका आदि देशों की शासनपद्धति 'लिखित' कही जाती है; इसके विपरीत, इंगलैंड की शासनपद्धति 'अलिखित' मानी जाती है। लिखित शासनपद्धति से अभिप्रायः उस शासनपद्धति से होता है, जिसके अधिकतर क़ानून किसी विशेष समय निर्धारित किये जाकर, लिखे हुए रहते हैं। अलिखित शासनपद्धति से उस शासनपद्धति का बोध होता है, जो राज्य की रीति-रस्म, रिवाज, रूढ़ी या परम्परा के आधार से बनी होती है, जिसके क़ानून सर्वसाधारण में लोकमत के अनुसार होने से ही, मान लिये जाते हैं। इन क़ानूनों में से कुछ, सुभीते के लिए, लिख भी लिये

जाते हैं। इंगलैंड की शासनपद्धति अलिखित मानी जाती है। यहाँ के कुछ महत्वपूर्ण क़ानून पार्लिमेंट द्वारा ख़ास-ख़ास समय पर स्वीकृत किये जाकर लिखे हुए भी हैं। तथापि इसमें संदेह नहीं कि इस शासनपद्धति में रिवाज या रूढ़ी का विशेष भाग है।

चौथा परिच्छेद

बादशाह और प्रिवी कौंसिल

"इस देश में बादशाह के कार्य, इच्छाएँ और उदाहरण वास्तविक शक्ति हैं। वह शासनपद्धति की प्रधान बातों का सच्चा संरक्षक है, जनता उसका महान आदर करती है, तथा उससे अत्यन्त प्रेम-भाव रखती है।"

—ग्लैडस्टन

बादशाह निर्वाचित होता है, या वंशानुक्रम से ? ; ऐतिहासिक विचार—नार्मन लोगों की विजय (सन् १०६६ ई०) से पूर्व, इंगलैंड में बादशाह* प्रायः निर्वाचित होता था; परन्तु वह शाही परिवार के व्यक्तियों में से ही चुना जाता था। उक्त वर्ष से जागीरदारी प्रथा आरम्भ होगयी और यह विचार बल पकड़ता गया कि अन्य जागीर की भाँति राजगद्दी भी वंशानुक्रम से मिलनी चाहिए। सोलहवीं शताब्दी में वंशानुक्रम अधिकार की अपेक्षा निर्वाचन-सिद्धान्त की विजय अधिक रही। सन् १६४१ ई० में बादशाह चार्ल्स प्रथम को प्राणदंड देने के पश्चात् ग्यारह वर्ष बिना बादशाह के काम चलाने से,

*बादशाह से तात्पर्य उस व्यक्ति से है, जो राजसिंहासन को सुशोभित करे, वह चाहे पुरुष हो, या स्त्री।

१६६० में बादशाह के पद की पुनस्स्थापना करने से, १६८८ में बादशाह जेम्स प्रथम को निकालकर, उसकी जगह विलयम तृतीय को गद्दी पर बैठाने से, और अन्त में १७०१ में उत्तराधिकारी का नियम बना देने से, यह अलिखित, परन्तु असंदिग्ध घोषणा होगयी कि यद्यपि इंगलैण्ड में बादशाहत का अधिकार वंशानुक्रम से माना जाता है परन्तु कोई बादशाह तभी तक राज्य कर सकता है जब तक पार्लिमेंट उसे चाहे।

उत्तराधिकार का नियम—बादशाह के उत्तराधिकार के सम्बन्ध में, पार्लिमेन्ट का अन्तिम क़ानून सन १७०१ ई० का 'सेटलमैंट एक्ट' है। इससे यह निश्चय किया गया था कि राज्य बादशाह जेम्स प्रथम की पोती, सोफ़िया के वंशजों को मिले।* उक्त कानून के अनुसार ब्रिटिश राजसिंहासन का अधिकार पैत्रिक अर्थात् वंशागत है। बादशाह का पद किसी को गुण कर्मानुसार नहीं दिया जाता। किसी बादशाह के मरने पर उसके सब से बड़े लड़के को राजगद्दी मिलती है। यदि सब से बड़ा लड़का जीवित न हो तो उसके सब से बड़े लड़के को (और लड़का न होने की दशा में लड़की को) राजगद्दी पाने का अधिकार होता है। यदि बादशाह के बड़े लड़के की कोई सन्तान न हो, तो बादशाहका दूसरा लड़का, और उसके जीवित न होने पर उसकी सन्तान अधिकारी होती है। यदि बादशाह का कोई लड़का या उसकी सन्तान जीवित न हो तो बादशाह की सब से बड़ी लड़की या उसकी सन्तान अधिकारिणी होती है। परन्तु शर्त यह है कि प्रत्येक राज्याधिकारी को राज्यारोहण के समय यह शपथ लेनी होती है कि वह

*सोफ़िया एक जर्मन रियासत हेनोवर के राजपुत्र से ब्याही गयी थी। इस प्रकार इंगलैण्ड के बादशाह हेनोवर वंश के होने आरम्भ हुए। यही वंश अब तक चला जा रहा है।

प्रोटेस्टेंट मत का ईसाई है। यदि वह रोमन केथलिक मत का ईसाई, या किसी अन्य धर्म का अनुयायी हो तो वह राज्याधिकार से वंचित कर दिया जाता है।

बादशाह के अधिकार—बादशाह के अधिकार दो प्रकार के होते हैं:—(१) जो उसे कानून द्वारा प्राप्त हैं; ये परिमित हैं। (२) जो उसे बिना कानून ही, बादशाह होने की हैसियत से, प्राप्त हैं; ये अपरिमित हैं। इनमें से दूसरी प्रकार के अधिकारों के अनुसार बादशाह यदि चाहे तो, पार्लिमेंट की अनुमति बिना ही, सेना के हथियार रखवा सकता है, सरकारी नौकरों को बर्खास्त कर सकता है, युद्ध और सन्धि कर सकता है, साम्राज्य के किसी भी निवासी को सरदार या 'लार्ड' बना सकता है, अपराधियों को क्षमा प्रदान कर सकता है। इस प्रकार अगरेज़ी शासनपद्धति के अनुसार चलता हुआ भी, बादशाह कई ऐसे कार्य कर सकता है, जिनसे देश की आन्तरिक उन्नति में तथा उसके अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बहुत बाधा पहुँचे। परन्तु वास्तव में जैसा कि पहले कहा गया है, आजकल वह कोई भी कार्य अपनी इच्छा के अनुसार नहीं करता; वह अपने अधिकारों को, अपने मन्त्रियों की सलाह बिना अमल में नहीं लाता। बादशाह जो भाषण देता है, वह भी प्रधान मन्त्री या अन्य मन्त्रियों द्वारा लिखा होता है; उसका अन्य राज्यों से जो पत्रव्यवहार होता है, वह भी मन्त्रियों से छिपा नहीं रहता। बादशाह अपना विवाह भी मन्त्रियों की इच्छा के विरुद्ध नहीं कर सकता।*

बादशाह के कार्य—बादशाह अपने कार्य, प्रधान मन्त्री की

*अष्टम एडवर्ड को मन्त्रियों की इच्छा के विरुद्ध विवाह करने के कारण राज सिंहासन छोड़ना पड़ा था।

सलाह के अनुसार करता है; उनमें से मुख्य-मुख्य निम्नलिखित हैं:— (१) मन्त्रियों की नियुक्ति करना। (२) प्रतिवर्ष पार्लिमेंट का उद्-घाटन करना। (३) पार्लिमेंट के अधिवेशन को समाप्त करना। (४) पार्लिमेंट द्वारा स्वीकृत कानूनी मसविदों को स्वीकार करके, उन्हें कानून का रूप देना। (५) प्रधान अधिकारियों तथा न्यायाधीशों को नियत करना। (६) पदाधिकारियों की नियुक्ति करना। (७) पार्लिमेंट में भाषण देना। (८) अपराधियों को क्षमा करना, और, (९) बड़ी-बड़ी उपाधियाँ तथा पदवियाँ देना इत्यादि।

शासनपद्धति में बादशाहका स्थान— यद्यपि बादशाह सब काम मन्त्रियों के परामर्श से करता है तथापि शासनपद्धति में उस का कुछ-न-कुछ महत्व रहता ही है। वह आवश्यकतानुसार मन्त्रियों को प्रोत्साहन या चेतावनी देता है। अपने अधिकारों का उचित रूप से उपयोग करके महारानी विक्टोरिया और जार्ज पचम जैसे बादशाह इंगलैंड के शासन-कार्य में बड़ा प्रभाव डालते रहे हैं। मन्त्रिमण्डल बनते हैं और बदलते हैं; मन्त्री आते और जाते हैं, परन्तु बादशाह स्थायी है, वह शासन-कार्य की शृङ्खला को बनाये रखता है। वह राज्य के विविध रहस्यों को जानता है, और शासन-नीति के व्यवहार के सम्बन्ध में उसका अनुभव प्रायः मन्त्रियों की अपेक्षा अधिक होना स्वाभाविक ही है। विशेषतया वैदेशिक विषयों में तो उसका प्रभाव बहुत ही पड़ता है। यह कहा जा सकता है कि समझदार बादशाह का प्रभाव, केवल प्रधान मन्त्री को छोड़ कर और सब व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक रहता है। यही कारण है कि इगलैंड में यद्यपि व्यावहारिक दृष्टि से बादशाह के अधिकार क्रमशः कम होते गये हैं, परन्तु इसके साथ ही जनता में उसका आदर-मान बढ़ता गया है। बादशाह ही

ब्रिटिश साम्राज्य की एकता का प्रत्यक्ष चिन्ह है; सम्पूर्ण साम्राज्य उससे प्रेम करता है।

स्वयं अपनी इच्छा के अनुसार बादशाह शासनकार्य में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता। पार्लिमेंट ने उसके इतने अधिकार ले लिये हैं कि वह केवल 'राज्य' करता है, 'शासन' नहीं। वह एक वैध (कान्स्टीचूशनल) शासक है। वह सब राजनैतिक दलों (पार्टियों) से परे है, वह किस दल का सदस्य नहीं हो सकता। अंगरेज़ी शासन-विधान में राजा सम्मान की वस्तु है, भय की नहीं। इगलैंड में बादशाह का पद लगभग नौ सो वर्ष से निरन्तर चला आ रहा है; केवल चार्ल्स प्रथम की फाँसी से, कुछ समय के लिए, यह सिलसिला टूट गया था। वहाँ इस पद की मान-मर्यादा अब तक बनी हुई है; हाँ वहाँ के प्राचीन तथा आधुनिक बादशाहों के अधिकारों में जमीन-आसमान का अन्तर है। व्यावहारिक दृष्टि से आजकल बादशाह पुरानी राजसत्ता की छाया-मात्र है।

शाही खर्च—बादशाह और उसके परिवार के निजी खर्च के लिए पार्लिमेंट प्रतिवर्ष निर्धारित रकम स्वीकार करती है। सरकारी खर्च की इस मद को 'सिविल लिस्ट' कहते हैं। एक बादशाह के शासन-काल में यह रकम प्रति वर्ष बदलती नहीं। जब तक वह बादशाह गद्दी पर रहता है, उसे निर्धारित रकम मिलती रहती है। उसके मरने पर, शाही खर्च की जांच होती है, और, नये बादशाह की आवश्यकताओं के अनुसार शाही खर्च की रकम निर्धारित की जाती है। इसका निश्चय करने से पूर्व पार्लिमेंट में पूरी बहस होती है। अन्य विषयों की तरह पार्लिमेंट का उस पर पूर्ण नियन्त्रण है। एक बादशाह के शासन-काल के समाप्त होने पर शाही खर्च का ब्योरा

प्रकाशित किया जाता है। बादशाह के पास निजी जायदाद काफी होती है, पर वह सब जायदाद राष्ट्र को समर्पित कर दी जाती है और बादशाह को अपने तथा अपने परिवार के खर्च के लिए पार्लिमेंट की उदारता पर निर्भर रहना पड़ता है। इस समय बादशाह को, प्रतिवर्ष मिलने वाली कुल रकम ४,१०,००० पौंड है; इसमें से १,१०,०० पौंड बादशाह की प्रिवी पर्स (निजी खर्च); १,३४,००० पौंड महल के कर्मचारियों का वेतन और पेंशन; १,५२,८०० पौंड महल का खर्च, भोजन वस्त्र आदि और १३,२०० पौंड दान और पारितोषिक आदि के लिए है। बादशाह की सन्तान तथा भाइयों आदि के लिए अलग-अलग रकमें निर्धारित है। सब शाही खर्च मिला कर इङ्गलैण्ड की कुल वार्षिक आय के एक प्रतिशत के बीसवें या पन्द्रहवें भाग से अधिक नहीं होता।

प्रिवी कौंसिल—बादशाह को उसके शासन-कार्य में सलाह देने के लिए एक सभा होती है, जिसे 'प्रिवी कौंसिल' (गुप्त सभा) कहते हैं। यह एक पुरानी सभा का क्रमशः विकसित स्वरूप है। नार्मन लोगों के आने तक इङ्गलैण्ड में 'विटन' सभा होती थी;* जो बादशाह को आवश्यक विषयों पर सलाह दिया करती थी। नार्मन बादशाहों के समय इसका स्वरूप कुछ बदल गया और यह अधिकतर जागीरदारों और बड़े-बड़े पादरियों की एक महासभा (ग्रेट कौंसिल) बन गयी। राज्य या दरबार के पदाधिकारियों में से जो व्यक्ति इस सभा के सदस्य होते थे, और अधिकतर बादशाह के पास रहा करते थे, उनकी धीरे-धीरे एक स्थायी कमेटी सी बन गयी। पीछे इस कमेटी के सदस्य

* 'विटन' शब्द का अर्थ बुद्धिमान है। इस सभा में बड़े-बूढ़े या अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति भाग लिया करते थे।

भी इतने अधिक हो गये कि उन सबका बादशाह से घनिष्ट सम्बन्ध न रह सका। अतः पंदरहवीं शताब्दी में बादशाह को सलाह देनेवाली इसकी एक छोटी कमेटी बनी; यह 'गुप्त सभा' कहलाने लगी।

इस सभा के अधिकार अब बहुत कम हो गये हैं। जब कभी बादशाह को ऐसी आज्ञा निकालनी होती है, जिसमें इस सभा की अनुमति की आवश्यकता हो तब इस सभा का अधिवेशन किया जाता है। अधिवेशन की सूचना सभा के सब सदस्यों के पास नहीं भेजी जाती। प्रायः छः ऐसे सदस्य बुला लिये जाते हैं जो प्रायः मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते हैं। उनके उपस्थित होने पर सभा का कार्य हो जाता है। बादशाह इस सभा में उपस्थित नहीं होता। इस सभा के सभापति को लार्ड प्रेसिडेंट कहते हैं। यह सदैव मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता है।

'बादशाह की परिषद' कहने से इसी सभा का आशय लिया जाता है। इस सभा की सलाह से बादशाह की जो आज्ञाएँ निकलती हैं, उन्हें 'सपरिषद बादशाह की आज्ञाएँ (आर्डर्स-इन-कौंसिल) कहा जाता है।

प्रिवी कौंसिल के सदस्य— इस सभा के सब सदस्यों की संख्या प्रायः तीन सौ से ऊपर होती है। इसमें निम्नलिखित व्यक्ति होते हैं:—(१) मन्त्रिमण्डल के सब भूत-पूर्व तथा वर्तमान सदस्य, (२) मुख्य राज्याधिकारी, (३) राजपरिवार के सदस्य, (४) कुछ 'बिशप' और 'आर्कबिशप', (५) बहुत से लार्ड, जिनमें प्रायः वे सब व्यक्ति होते हैं, जिन्होंने स्वदेश में तथा विदेश में उच्च पदों पर कार्य किया हो, (६) कुछ मुख्य-मुख्य भूतपूर्व तथा वर्तमान न्यायाधीश, (७) उपनिवेशों और भारतवर्ष के कुछ राजनीतिज्ञ, और (८) इस सभा के सदस्य की उपाधि-प्राप्त अन्य सज्जन।

बादशाह को अधिकार है कि वह किसी व्यक्ति को इस सभा का सदस्य बनाये, अथवा किसी सदस्य को इससे पृथक् कर दे। इस सभा के सदस्य प्रायः वे व्यक्ति बनाये जाते हैं, जिन्होंने राजनीति, साहित्य, विज्ञान, शासन या युद्ध आदि क्षेत्रों में विशेष सेवा की हो।

इस सभा के सदस्य आजीवन होते हैं, और 'राइट आनरेबल' की उपाधि से सम्मानित होते हैं। सभा के सब सदस्य उस समय आमन्त्रित किये जाते हैं, जब नये बादशाह का राज्याभिषेक होता है, और वह प्रचलित कानून के अनुसार शासन करने की प्रतिज्ञा करता है। 'कामन' सभा का अधिवेशन कराने तथा स्थगित कराने के लिए, बादशाह के घोषणा-पत्र इसी सभा में तैयार होते हैं।

प्रिवी कौंसिल की उपसमितियाँ—इस सभा की कई एक उपसमितियां हैं। शिक्षा कार्य के लिए शिक्षा-उपसमिति है। कृषि तथा व्यापार आदि के लिए भी उपसमितियां हैं। न्याय-कार्य के लिए न्याय-उपसमिति है। इनमें से न्याय-उपसमिति को छोड़कर शेष उपसमितियाँ विशेष कार्य नहीं करतीं। उनके कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न विभागों का संगठन है। प्रत्येक विभाग अपने-अपने कार्य का प्रबन्ध करता है।

प्रिवी कौंसिल की न्याय-उपसमिति ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेशों तथा ब्रिटिश भारत की उच्चतम अदालतों की अपील सुनती है, और साम्राज्यान्तर्गत देशों की सब से बड़ी अदालत है। इसके फ़ैसलों की कहीं अपील नहीं होती। इसमें ब्रिटिश उपनिवेशों के मुकदमे तो बहुत कम आते हैं, अधिकतर भारतवर्ष के ही मामले पेश होते हैं। इस उपसमिति में कुछ न्यायाधीश हिन्दुस्तानी भी रहते हैं।* इसके सब सदस्यों को वेतन मिलता है।

---

*प्रायः भारतवासी बोलचालमें इस उपसमिति को ही 'प्रिवी कौंसिल' कहते हैं।

पाँचवाँ परिच्छेद

मन्त्रिमण्डल

ऐतिहासिक परिचय—पिछले परिच्छेद में बादशाह की प्रिवी कौंसिल का वर्णन किया गया है। उसके बहुत बड़ी होने के कारण इसके सदस्यों में से कुछ की एक छोटी कमेटी बनी, जिसे मन्त्रिमण्डल कहते हैं, और जिस पर बादशाह का विशेष विश्वास होता है। शासनपद्धति सम्बन्धी अन्य विषयों की भांति, इङ्गलैण्ड की इस संस्था का भी क्रमशः विकास हुआ है।

चौदहवीं शताब्दी तक बादशाह अपने मन्त्रियों को स्वयं चुनता था। मन्त्री भी प्रायः बादशाह की इच्छानुसार काम करनेवाले होते थे, चाहे उनके ऐसे करने से राज्य का हित हो या न हो। परन्तु सतरहवीं शताब्दी के अन्त में लोगो की यह धारणा हुई कि यदि मन्त्रियों का कार्य जनसाधारण-सभा के अधिकतर सदस्यों के मत के प्रतिकूल हो तो उन पर अभियोग लगाया जाना चाहिए। इस विषय पर विचार होते-होते अन्ततः यह सोचा गया कि ऐसे सज्जनों को मन्त्री बनाया जाया करे, जिनके मत से पार्लिमेंट के अधिकतर सदस्य सहमत हों। अब यही प्रथा प्रचलित है। सन् १७१४ ई० में जार्ज प्रथम गद्दी पर बैठा। यह तथा इसका पुत्र जो पीछे जार्ज द्वितीय के नाम से बादशाह बना, अंगरेजी भाषा न जानने के कारण मन्त्रिमण्डल या पार्लिमेंट के वादविवाद में भाग न ले सकते थे। इसलिए इनके समय में राज्य का शासन-सूत्र बादशाह के हाथ से निकल कर प्रधान मन्त्री के हाथ में चला गया और मन्त्रिमण्डल के अधिकार बहुत बढ़ गये। यद्यपि पीछे जार्ज तृतीय ने मन्त्रियों का कुछ विरोध किया, पर

वह सफल न हो सका; और उनकी शक्ति क्रमशः बढ़ती ही चली गयी।

मंत्री-वर्ग का निर्माण—जब पार्लिमेंट का नया निर्वाचन होता है, या जब प्रधान मंत्री अपने पद से अस्तीफ़ा देता है, तो बादशाह जनसाधारण-सभा के ऐसे सदस्य को प्रधान मंत्री बनाता है जो उस सभा के अधिकतम सदस्यों को अपनी नीति के पक्ष में रख सके। प्रधान मन्त्री अन्य मन्त्रियों को चुनकर मन्त्री-वर्ग ('मिनिस्ट्री') बनाता है। ये अन्य मन्त्री 'कामन' (जनसाधारण) सभा अथवा 'लार्ड' सभा के सदस्य होते हैं। मंत्री वर्ग में प्राय: प्रत्येक विभाग के दो-दो मन्त्री रहते हैं, एक कामन-सभा का सदस्य होता है, और दूसरा लार्ड-सभा का। इससे यह सुभीता होता है कि दोनों सभाओं में ऐसे आदमी रहते हैं, जिनका भिन्न-भिन्न सरकारी विभागों में घनिष्ट सम्बन्ध हो, और जो अपने-अपने विभाग से सम्बन्ध रखनेवाले उन प्रश्नों का भली भाँति उत्तर दे सकें, जो उक्त सभाओं के सदस्यों द्वारा समय-समय पर उपस्थित किये जायँ।

बहुधा मन्त्री उसी दल के होते हैं, जिस दल का सदस्य प्रधान मन्त्री हो; परन्तु विशेष दशा में दो या अधिक दलों के सदस्य भी मन्त्री-वर्ग में ले लिये जाते हैं। ऐसे वर्ग को गंगा-जमुनी मन्त्री-वर्ग 'कोअलिशन-मिनिस्ट्री' कहते हैं। चुनाव का यह कार्य बड़े महत्व का होता है, और, सरकार की स्थिरता मन्त्री वर्ग के बुद्धिमत्ता पूर्वक किये हुए चुनाव पर निर्भर होती है। प्रधान मन्त्री द्वारा चुने हुए मन्त्रियों को बादशाह मन्त्री नियत कर देता है। ब्रिटिश मन्त्री-वर्ग में लगभग ५० मन्त्री होते हैं। प्रत्येक मन्त्री को कोई एक राजनैतिक विभाग सौंप दिया जाता है, और, वह उसका उत्तरदायी होता है।

मन्त्री-वर्ग और पार्लिमेंट का सम्बन्ध—प्रत्येक मन्त्री अपने-अपने विभाग के लिए, और सम्पूर्ण मन्त्री-वर्ग शासन-नीति के लिए, पार्लिमेंट के प्रति उत्तरदायी होता है। यदि महत्वपूर्ण प्रस्ताव पर मन्त्री-वर्ग 'कामन' सभा में हार जाय तो प्रधान मन्त्री अपने पद से अस्तीफ़ा दे देता है और मन्त्री-वर्ग भङ्ग होजाता है। स्मरण रहे कि शासनपद्धति का कोई ऐसा नियम नहीं है कि उपर्युक्त परिस्थिति में प्रधान मन्त्री और मन्त्री-वर्ग को अस्तीफ़ा देना ही पड़े, परन्तु प्रचलित प्रथा के अनुसार वे अस्तीफ़ा दे देते हैं। यदि वे अस्तीफ़ा न दें, तो वार्षिक ख़र्च की माँगों की स्वीकृति के समय, कामन-सभा उनका वेतन तथा उनके विभाग की माँग स्वीकार न करे और उनका शासन-कार्य चलना असम्भव होजाय। परन्तु ऐसा होने का अवसर नहीं आता, मन्त्री-वर्ग पहले ही अस्तीफ़ा दे देता है। तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि पार्लिमेन्ट का मन्त्रियों पर पूर्ण प्रभुत्व है। जब कभी कोई मन्त्रीवर्ग अपना कार्यक्रम स्वीकार न करा सकने के कारण, भङ्ग होगा तो पार्लिमेन्ट को नया प्रधान मन्त्री चुनने का भार ग्रहण करना होगा। यदि इस नये प्रधान मन्त्री के बनाये हुए नये मन्त्री वर्ग का भी कार्यक्रम स्वीकृत न किया गया तो कोई व्यक्ति सहसा प्रधान मन्त्री के पद को ग्रहण करना स्वीकार न करेगा, और शासन-यन्त्र चलने में बाधा उपस्थित होने की शंका होगी। इसलिए साधारण-तया मन्त्री जो प्रस्ताव उपस्थित करते हैं, वे पार्लिमेंटमें स्वीकृत होजाते हैं। इसके विपरीत, यदि पार्लिमेन्ट का कोई सदस्य अपना प्रस्ताव उपस्थित करना चाहे और मंत्री-वर्ग उसके विरुद्ध हो, तो उसके स्वीकृत होने की सम्भावना बहुत कम होती है।

मन्त्रिमण्डल—मन्त्रिमंडल या 'केबिनेट' में मन्त्री-वर्गके मुख्य-

मुख्य मन्त्री रहते हैं। इसके सदस्यों की संख्या निश्चित नहीं है। इसका संगठन किसी निर्धारित नियम के अनुसार नहीं होता। साधारणतया आजकल लगभग बीस मन्त्री होते हैं। मन्त्रिमंडल, ब्रिटिश शासन सम्बन्धी सब कार्य के लिए कामन-सभा के प्रति उत्तरदाता है। प्रधान मन्त्री सरकार की नीति ठहराता है और विविध राजनैतिक विभागों का निरीक्षण करता है। यद्यपि मन्त्रिमन्डल के सदस्य कामन-सभा के सदस्य होते हैं, आवश्यकता होने पर ये बादशाह द्वारा उस सभा को भंग करा सकते हैं।

उसकी कार्यपद्धति—मन्त्रिमंडल की बैठक में प्रधान मन्त्री सभापति होता है। इस सभा में शासन-नीति सम्बन्धी विचार होता है तथा यह निश्चय होता है कि सरकार की ओर से कौन-कौन से कानूनी मसविदे या प्रस्ताव पार्लिमेंट में उपस्थित किये जायँ। प्रत्येक मन्त्री अपने-अपने विभाग का उत्तरदाता होता है, और, उससे सम्बन्ध रखनेवाली साधारण बातों का निर्णय, जिनका अन्य विभागों से भी सम्बन्ध हो, मन्त्रिमंडल की बैठक में होता है। मंत्रिमंडल में प्रत्येक बात का निर्णय उपस्थित सदस्यों के बहुमत के अनुसार नहीं होता। प्रधान मन्त्री तथा कुछ खास-खास मन्त्रियों के मत को अधिक महत्व दिया जाता है, और प्रायः सब बातों का निर्णय उन्हीं के मतानुसार होता है। यदि कोई मन्त्री इनके निर्णय से असन्तुष्ट हो तो वह अपने पद से इस्तीफा देने में स्वतन्त्र है, परन्तु जब तक वह अपने पद से पृथक् न हो, उसका कर्तव्य है कि वह पार्लिमेंट में प्रधान मन्त्री का साथ दे और उसका समर्थन करे।

मंत्रिमंडल की सब कार्रवाई गुप्त रखी जाती है। यदि किसी विषय के सम्बन्ध में मंत्रिमंडल के सदस्यों में मतभेद हो तो वह भी

गुप्त रखा जाता है। पार्लिमेंट में तो सब मंत्री प्रधान मंत्री के मत के अनुसार ही काम करते हैं। हाँ, यदि कोई मंत्री मतभेद के कारण अस्तीफ़ा दे तो उसे अधिकार रहता है कि वह अस्तीफ़ा देने के कारणों को पार्लिमेंट में प्रगट कर दे। यदि कोई मंत्री ऐसा काम करे, जो मन्त्रिमंडल की एकता के विरुद्ध हो तो प्रधान मंत्री को अधिकार है कि उस मंत्री को अस्तीफ़ा देने के लिए वाध्य करे। मंत्रिमंडल के निर्णयों का कोई लिखित विवरण नहीं रखा जाता। महत्वपूर्ण निर्णयों की सूचना, प्रधान मन्त्री बादशाह को दे देता है।

मंत्रिमंडल और बादशाह का सम्बन्ध—जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, बादशाह शासन सम्बन्धी सब कार्य, मंत्रिमंडल के मन्तव्यों तथा प्रधान मंत्री के परामर्श के अनुसार, करता है। यदि वह चाहे तो वह ऐसा करने से इनकार भी कर सकता है। ऐसी परिस्थिति में प्रधान मन्त्री अपने पद से अस्तीफ़ा देदेता है और, इसके फलस्वरूप सभी मंत्रियों को अस्तीफ़ा देना होता है, और बादशाह को नये प्रधान मन्त्री का चुनाव करना होता है। नया प्रधान मन्त्री नये मन्त्री-वर्ग का चुनाव करता है। यदि नये प्रधान मन्त्री का मत पुराने प्रधान मंत्री के अनुसार ही रहे तो बादशाह को अपनी इच्छा के विरुद्ध उसकी बात मान लेनी पड़ती है या पार्लिमेंट को भंग करना होता है। बादशाह पार्लिमेंट को ऐसी दशा में ही भंग करता है, जब उसे इस बात का विश्वास हो कि जनता नये चुनाव में बादशाह के निर्णय का समर्थन करेगी।

पार्लिमेंट के नये चुनाव के बाद नया प्रधान मंत्री चुना जाता है, और वह अपना नया मंत्री वर्ग बनाता है। यदि यह प्रधान मंत्री भी पुराने प्रधान मंत्री की नीति का समर्थन करे तो बादशाह को अपनी

इच्छा के विरुद्ध उसकी बात माननी पड़ती है, अन्यथा, जनता के प्रतिनिधियों से उसका विरोध होने की सम्भावना होती है। प्रायः कोई बादशाह यह विरोध होने देना नहीं चाहता, क्योंकि वह जानता है कि भूत काल में ऐसे विरोध के कारण एक बादशाह (चार्ल्स प्रथम) को अपना सिर देना पड़ा और दूसरे बादशाह (जेम्स द्वितीय) को अपना सिंहासन खोना पड़ा था। इसीलिए बादशाह साधारणतः अपनी इच्छा के अनुसार शासन-कार्य नहीं करता, वरन् प्रधान मंत्री और मंत्रिमण्डल के मन्तव्यों के अनुसार सब कार्य सम्पादन करता है।

इस विचार से कुछ लोग इंगलैण्ड के बादशाह को मंत्रिमण्डल के हाथ की कठपुतली कहते हैं, परन्तु वास्तव में जैसा कि पहले कहा जा चुका है, बादशाह व्यक्तित्व का प्रभाव शासन सम्बन्धी कार्यों में थोड़ा-बहुत अवश्य रहता है।

मंत्रिमंडल के सदस्य—मंत्रिमण्डल के निम्नलिखित पदाधिकारी हैं, और उनका कार्य इस प्रकार है :—

१–प्रधान मंत्री और प्रधान कोषाध्यक्ष—प्रधान मंत्री के कार्य बताये जा चुके हैं। वह प्रधान कोषाध्यक्ष भी बन जाता है। वह 'कामन'-सभा का नेता भी माना जाता है। उसे दस हजार पौंड वार्षिक वेतन मिलता है।* अवकाश ग्रहण करने पर उसे प्रतिवर्ष दो हजार पौंड पेन्शन दी जाती है।

२—लार्ड प्रेसीडेंट-आफ़-दि-कौंसिल—यह प्रिवी कौंसिल का सभापति होता है। इसे विशेष कार्य करना नहीं होता; यह विचार किया करता है।

---

* अन्य मंत्रियों को प्रतिवर्ष दो हजार से पांच हजार पौंड तक वार्षिक वेतन दिया जाता है।

३—लार्ड चान्सलर—यह लार्ड सभा का, तथा ब्रिटिश संयुक्त राज्य के न्याय-विभाग का, प्रधान होता है और न्यायाधीशों को नियत करता है। इसके अतिरिक्त, यह सरकार का मुख्य क़ानूनी सलाहकार होता है। राजकीय मोहर इसी के पास रहती है। यह पद रोमन कैथलिक ईसाई को नहीं मिलता।

४—लार्ड प्रिवी सील—सन् १८८४ ई० से पहले यह पदाधिकारी बादशाह के हस्ताक्षर किये हुए महत्वपूर्ण आज्ञापत्रों पर मोहर लगाता था, और इस लिए उन आज्ञापत्रों का उत्तरदायी समझा जाता था। परन्तु उक्त वर्ष से इस मोहर की आवश्यकता न रही और यह कार्य भी न रहा। अब यह पद मन्त्री-वर्ग के किसी ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति को दिया जाता है जो अपना सब समय राष्ट्र की शासन सम्बन्धी बातों पर विचार करने में लगा दे। प्रायः इस पद वाला मन्त्री लार्ड-सभा का नेता भी होता है। मन्त्रिमण्डल में इसके विचारों का बड़ा महत्व है।

५—अर्थ-मन्त्री या चान्सलर-आफ़-ऐक्सचेकर—अर्थ विभाग का सब कार्य इसके अधीन होता है। यही बजट तैयार करता है, और पार्लिमेंट में पेश करता है।

६—स्वदेश-मन्त्री या होम सेक्रेटरी—इसका कार्य, प्रबन्ध करना और शान्ति रखना है। पुलिस, जेल, सुधार-गृह (रिफ़ार्मेटरी') आदि इसके अधीन होती हैं। यह खान, कारख़ाने आदि विविध औद्योगिक संस्थाओं के इनस्पेक्टरों को नियत करता और उनके कार्य को देखता है। यह इस बात का भी प्रबन्ध करता है कि विदेशियों को किन-किन नियमों का पालन करने से नागरिक के अधिकार दिये जायँ, तथा किन विदेशियों को इंगलैण्ड में रहने ही न दिया जाय।

७—विदेश-मन्त्री—यह इस बातका निश्चय करता है कि इंगलैण्ड की अन्य राज्यों से क्या नीति रहनी चाहिए। किसी राज्य से युद्ध करना, या शान्ति व्यवहार करना, अथवा सन्धि करना उसका कार्य है। वास्तव में इस प्रकार के महत्वपूर्ण विषयों का निश्चय तो मन्त्रिमण्डल में ही होता है, विदेश-मन्त्री उस निश्चय को कार्यरूप में

परिणत करता है। इंगलैण्ड का अन्य देशों से जो राजनैतिक पत्र-व्यवहार होता है, उसका भी उत्तरदाता विदेश-मन्त्री ही होता है।

८—उपनिवेश-मन्त्री—यह साम्राज्य के स्वाधीन भागों के शासन में कुछ हस्तक्षेप नहीं कर सकता, परन्तु अन्य उपनिवेशों के सुशासन और उन्नति के लिए ब्रिटिश पार्लिमेंट के प्रति उत्तरदायी होता है।

९—भारत-मन्त्री—यह भारतवर्ष के सुशासन, शांति और उन्नति के लिए उत्तरदायी है। भारत-सरकार को इसकी आज्ञानुसार कार्य करना होता है। इसे अपने कार्य में सहायता देने के लिए एक सभा रहती है, जिसे इंडिया कौंसिल कहते हैं।

१०—लेंकेस्टर की डची का चान्सलर—यह बादशाह की निजी रियासत का प्रबन्ध करता है। इस पद का कार्य अधिक नहीं रहता, इसलिए यह मन्त्री अपना समय शासन सम्बन्धी बातों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने में लगाता है।

निम्नलिखित पदाधिकारियों का कार्य उनके नाम से स्पष्ट है :—

११—स्काटलैण्ड का मन्त्री। १२—व्यापारिक बोर्ड का सभापति १३—युद्ध-मंत्री। १४—नौ सेना विभाग का प्रधान। १५—वायु-मंत्री। १६—वायुयान-निर्माण-मंत्री। १७—स्वाधीन-उपनिवेश-मंत्री। १८—यातायात-मंत्री। १९—सूचना-मंत्री २०—खाद्यपदार्थ-मंत्री। २१—रसद-मंत्री। २२—विभाग-हीन मंत्री। २३—पोस्टमास्टर जनरल। २४—शिक्षा-मंत्री। २५—स्वास्थ्य-मन्त्री। २६—कृषि-मन्त्री। २७—मज़दूर-विभाग-मन्त्री। २८—निर्माण-विभाग-मन्त्री।

युद्धकाल में युद्ध-कार्य का संचालन करने के लिए युद्ध-मन्त्रिमण्डल बनाया जाता है। इसमें मन्त्रिमण्डल के आठ दस प्रमुख सदस्य होते हैं।

पहले कहा जा चुका है कि मन्त्रिमण्डल के सदस्य मन्त्रीवर्ग से ही लिये जाते हैं। उनके अतिरिक्त, मन्त्रिवर्ग में ऐसे पदाधिकारी भी रहते हैं जो मन्त्रिमण्डल के सदस्य नहीं होते। ऐसे वर्तमान पदाधिकारी निम्न-लिखित हैं:—पेन्शन विभाग का मन्त्री; अटार्नी-जनरल; सालिसिटर-

जनरल; स्काटलैंड का सालिसिटर-जनरल; अर्थ-युद्ध-मन्त्री; लार्ड एडवोकेट; स्काटलैंड का उपमन्त्री; भारतवर्ष का उपमन्त्री; और विविध विभागों के उपमन्त्री।

मन्त्री और सरकारी कर्मचारी—शासन कार्य के प्रत्येक विभाग में एक मन्त्री के अधीन कई एक स्थायी सरकारी कर्मचारी रहते हैं। मन्त्री अपने विभाग सम्बन्धी नीति निर्धारित करता है; उस नीति के अनुसार शासन-कार्य करना स्थायी सरकारी कर्मचारी का काम है। ये कर्मचारी अपने पद पर बराबर बने रहने के कारण अपने विभाग की सब आवश्यक बातों तथा बहुत-सी बारीकियों को जानते हैं। मन्त्रिमण्डल समय-समय पर बदलते रहते हैं। नये-नये मन्त्री नियुक्त होते हैं; उन्हें अपने विभाग के सम्बन्ध में उतना ज्ञान नहीं हो सकता। वे अपने कार्य के लिए उक्त कर्मचारियों का ही आसरा लेते हैं। इन कर्मचारियों की ही बदौलत शासनकार्य की शृङ्खला बनी रहती है।

यदि कोई मन्त्री अपने विभाग की ब्यौरेवार बातों में हस्तक्षेप करने लगे तो सरकारी कर्मचारी उसे प्रत्येक विषय में इतनी बात बतला सकते हैं कि मन्त्री फाइलों के बोझ से दब जाय, उसे पार्लिमेंट के आवश्यक कार्यों के लिए अवकाश ही न रहे और, अन्त में लाचार होकर, उसे सरकारी कर्मचारियों की ही शरण लेनी पड़े।

यदि सरकारी कर्मचारियों का कार्य सन्तोषप्रद न हो तो मन्त्री उन पर जुर्माना कर सकता है, वह उन्हें बर्खास्त भी कर सकता है। यदि सरकारी कर्मचारी द्वारा कोई त्रुटि हो जाय तो उसके लिए मन्त्री उत्तरदायी समझा जाता है, उसके अच्छे कार्य का श्रेय भी मन्त्री को ही मिलता है। सरकारी कर्मचारी को उसका पुरस्कार वेतन-वृद्धि या

पदवी के रूप में प्राप्त होता है। कोई सरकारी कर्मचारी जनसाधारण-सभा का सदस्य बनने के लिए उम्मेदवार नहीं हो सकता।

सिविल सर्विस—भिन्न-भिन्न सरकारी विभागों के लिए जिन स्थायी सरकारी कर्मचारियों का ऊपर उल्लेख किया गया है, वे अधिकतर सिविल सर्विस की प्रतियोगी परीक्षा पास होते हैं; जिस वर्ष जितने कर्मचारियों की आवश्यकता होती है, उस वर्ष उतने आदमी उन व्यक्तियों में से ले लिये जाते हैं, जिन्होंने यह परीक्षा दी हो, और क्रमानुसार अधिक-से-अधिक नम्बर पाये हों। कुछ ऊँचे पदों पर, उनसे नीचे पद वालों को तरक्की देकर, नियुक्ति की जाती है।

इन स्थायी कर्मचारियों के पदों का वेतन निश्चित रहता है और वह क्रमशः बढ़ता जाता है। ये उस समय तक अपने पद से पृथक् नहीं किये जाते, जब तक वे नेकचलनी से अपना कार्य करते रहें। जब ये नौकरी से अवकाश ग्रहण करते हैं, तो इन्हें पेन्शन मिलता है।

छठा परिच्छेद

पार्लिमेंट का संगठन

उत्तम शासनपद्धति का आदर्श यह है कि प्रभुत्व या अन्तिम नियन्त्रण-शक्ति जनता की हो, प्रत्येक नागरिक को न केवल उस प्रभुत्व के उपयोग में मत देने का अधिकार हो, परन्तु उसे समय-समय पर कोई स्थानीय या देशीय सार्वजनिक कार्य करके शासन में वास्तविक भाग लेना पड़े।

—जे० एस० मिल

प्राक्कथन—ब्रिटिश संयुक्त राज्य की सबसे बड़ी कानून बनाने वाली संस्था पार्लिमेंट है। अन्य देशों की आधुनिक व्यवस्थापक

संस्थाओं में यह बहुत पुरानी है, और कई देशों ने इसके नमूने पर अपनी-अपनी व्यवस्थापक सभाओं की रचना की है। इसलिए इसे 'पार्लिमेंटों की जननि' कहा जाता है। यद्यपि साधारण बोलचाल में पार्लिमेंट से उसकी एक ही सभा (जनसाधारण-सभा) का अभिप्राय होता है, वास्तव में उसकी दो सभाएँ हैं, (१) 'कामन' (जनसाधारण) सभा या 'हाउस-आफ़-कामन्स' और, 'लार्ड' सभा या 'हाउस-आफ़-लार्ड्स'। पार्लिमेंट के आधुनिक संगठन आदि के सम्बन्ध में आगे विचार करेंगे। पहले यह जान लेना चाहिए कि पार्लिमेंट का प्रादुर्भाव किस प्रकार हुआ, तथा इसे अपना वर्तमान स्वरूप कैसे मिला।

पार्लिमेंट की प्रारम्भिक स्थिति—ऐंग्लो-सेक्सन काल में अर्थात् दसवीं शताब्दी तक, इंगलैंड में बादशाह ही सब नियमों को बनाता या बनवाता था। हाँ, वह मुख्य-मुख्य नियमों में, तथा असाधारण करों के निर्धारित करने में, 'विटन-सभा' की सलाह ले लिया करता था, जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। ग्यारहवीं शताब्दी में राज्याधिकार नार्मन बादशाहों के हाथ में चला गया। इन्होंने इंगलैंड को भूमि, अपनी इच्छानुसार अपने अनुचरों या सैनिक सेवा करनेवालों में विभक्त करदी। इनके समय में 'विटन-सभा' का स्थान महासभा ('ग्रेट कौंसिल') ने ले लिया। इस सभा के सदस्य जागीरदार, सरदार, प्रधान लाट पादरी, और लाट पादरी आदि बड़े-बड़े आदमी होते थे। बारहवीं शताब्दी में कुछ बड़े-बड़े लोगों में यह भाव फैला कि कर निर्धारित करने का अधिकार उन्हें ही होना चाहिए, बादशाह को नहीं। पीछे, उन्होंने आवश्यकता समझ लेने पर, जनसाधारण को भी अपने साथ मिला लिया; और, वे सम्मिलित शक्ति से बादशाह का विरोध करने लगे। अन्ततः सन् १२१५ ई० में

प्रजा ने जौन बादशाह पर विजय पायी और, उससे बलपूर्वक 'मेगना-चार्टा' नामक महान अधिकार-पत्र प्राप्त कर लिया।

दो सभाएँ—इस अधिकार-पत्र के अनुसार यह व्यवस्था की गयी कि छोटे ताल्लुकेदारों आदि को स्थानीय शासकों अर्थात् 'शेरिफ़ों' के पास भेजे हुए साधारण आज्ञा-पत्रों द्वारा बुलाया जाय, और बड़े-बड़े ताल्लुक़ेदार पृथक् आमंत्रण-पत्रों ('समन') बुलाये जायँ। क्रमशः छोटे ताल्लुक़ेदारों का अपने क्षेत्र के निवासियों में से निर्वाचन होने लगा और सभा में इनके बैठने का अलग प्रबन्ध हो गया। इस प्रकार महासभा की, जो इस समय पार्लिमेंट कही जाने लगी थी, दो सभाएँ हो गयीं; एक का नाम पड़ा 'कामन' (जनसाधारण) सभा, और दूसरी का नाम हुआ 'लार्ड'-सभा।

'कामन' सभा

सन् १८८५ में 'कामन'-सभा के सदस्यों की संख्या ६७० निर्धारित की गयी थी। सन् १९१८ के कानून से ग्रेट-ब्रिटेन में प्रतिनिधित्व का आधार सत्तर हजार व्यक्तियों के लिए एक प्रतिनिधि किया गया। पीछे आयर्लैंड में तेतालीस हजार व्यक्तियों के लिए एक प्रतिनिधि रखना निश्चित हुआ। इस प्रकार 'कामन'-सभा के सदस्यों की संख्या ७०७ हुई। सन् १९२२ में आयर्लैंड के लिए अलग पार्लिमेंट बनजाने पर अब 'कामन'-सभा में ६१५ सदस्य होते हैं, जिनमें १३ सदस्य आयर्लैंड के सम्मिलित हैं।* निर्वाचन प्रति पाँचवें वर्ष होता है। यह समय पार्लिमेंट की आज्ञा से बढ़ाया जा सकता है।† प्रधान मन्त्री की

*सदस्यों की संख्या की दृष्टि से सभा का भवन बहुत छोटा है। परन्तु प्रायः उपस्थिति कम होने से बहुत-सी जगह खाली पड़ी रहती है।

†अक्तूबर १९४० में तत्कालीन पार्लिमेंट का समय पांच वर्ष से बढ़ाकर छः वर्ष किया गया।

सिफारिश से, बादशाह नया निर्वाचन पाँच वर्ष से पहले भी कर सकता है।

पहले इस विषय का कोई नियम नहीं था कि पार्लिमेंट का चुनाव इतने समय बाद अवश्य हो। सन् १६४१ में त्रैवार्षिक कानून पास हुआ था। सन् १७१६ ई० में कानून बना कि पार्लिमेंट का चुनाव प्रति सातवें वर्ष हुआ करे। यह नियम सन् १९११ ई० तक रहा। इस वर्ष से प्रत्येक नयी पार्लिमेंट का जीवन पांच वर्ष निर्धारित कर दिया गया है।

प्रत्येक सदस्य को भाषण-स्वातन्त्र्य है, अर्थात् उस पर उसके भाषण के लिए राजद्रोह या मान-हानि का अभियोग नहीं चल सकता। वह दीवानी मामले में गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। सन् १९३७ ई० से प्रत्येक सदस्य को ६०० पौंड प्रति वर्ष मिलते हैं।

निर्वाचक होने के लिए अयोग्यताएँ—निम्नलिखित व्यक्ति इस सभा के सदस्यों के लिए निर्वाचक नहीं हो सकते:—

१—नाबालिग, लार्ड, विदेशी,* दिवालिया और पागल।

२—किसी घोर अपराध या राजद्रोह के अपराधी, जब तक ये अपने अपराध का दण्ड न भुगतलें, या उसके लिए क्षमा प्राप्त न करलें।

३—जो निर्वाचन के समय किसी निर्वाचन सम्बन्धी अपराध के अपराधी हों।

[ये अपराधी ठहराये जाने के समय से सात वर्ष तक निर्वाचन के अधिकारी नहीं होते]

४—निर्वाचन-कार्य में लगे हुए व्यक्ति।

---

*विदेशी व्यक्ति कुछ शर्तों के पालन करने पर ब्रिटिश प्रजा बन सकते हैं उन शर्तों में मुख्य, ब्रिटिश संयुक्त राज्य में पांच वर्ष निवास करना है।

उम्मेदवारी के लिए अयोग्यता—निम्नलिखित व्यक्ति कामन-सभा के उम्मेदवार नहीं हो सकते:—

१—जो व्यक्ति निर्वाचक नहीं हो सकते।

२—पादरी, चाहे वह रोमन केथलिक हों, या प्रोटेस्टेन्ट।

३—स्थायी सरकारी कर्मचारी, जज, पेन्शन पानेवाले व्यक्ति; और सरकारी कामों के ठेकेदार, 'शेरिफ' (स्थानीय प्रबन्धाधिकारी) और निर्वाचन-स्थान के निर्वाचन-अफसर।

निर्वाचक कौन हो सकता है?—ब्रिटिश संयुक्त राज्य में निर्वाचक-संघ तीन तरह के हैं; (१) साधारण, (२) व्यावसायिक और (३) विश्वविद्यालय के। कोई व्यक्ति दो से अधिक निर्वाचक-संघोंसे मत नहीं दे सकता, और इन दो में से एक, साधारण निर्वाचक-संघ होना आवश्यक है। निर्वाचक-सूची प्रति वर्ष तैयार की जाती है।

साधारण निर्वाचक-संघ के मतदाताओं की सूची में वही व्यक्ति नाम लिखा सकता है जिसमें निर्वाचक होने की अयोग्यता न हो, और जो उस वर्ष अपने निर्वाचन क्षेत्र की सीमा में, तीन महीने रहा हो। व्यावसायिक निर्वाचक संघ में वही व्यक्ति मतदाता हो सकता है, जिसकी दस पौंड वार्षिक किराये वाली दुकान हो। ऐसे व्यक्ति की स्त्री या पति भी मताधिकारी होता है। स्त्रियों को पुरुषों के समान ही मताधिकार है। विश्वविद्यालय के निर्वाचक-संघ में वही व्यक्ति मतदाता हो सकते हैं जो उस विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट हों, और जिनकी आयु इक्कीस वर्ष या इससे अधिक हो।

निर्वाचन-अपराध और उसका नियन्त्रण—सन् १८८३ ई० के कानून के अनुसार निम्नलिखित उपायों से, निर्वाचन सम्बन्धी

अनुचित व्यवहार रोका जाता है:—

१—रिश्वत देना, दावत देना, अनुचित प्रभाव डालना और झूठे नाम से काम करना, अपराध माना गया है।

२—निर्वाचन-कार्य के लिए होनेवाले खर्च की सीमा निर्धारित कर दी गयी है।

[प्रति निर्वाचक, सात पैंस (छः आने) के अधिक खर्च न किया जाना चाहिए।]

३—प्रत्येक उम्मेदवार को अपने निर्वाचन-व्यय का पूरा हिसाब, सरकार द्वारा नियुक्त कर्मचारी को देना होता है।

४—जो व्यक्ति किसी निर्वाचन-अपराध के अपराधी माने जाते हैं, उन्हें दण्ड दिया जाता है।

इस कानून के होने पर भी इंगलैण्ड में निर्वाचन-अपराधों की संख्या काफी अधिक रहती है।

सदस्यों और निर्वाचकों का सम्बन्ध—कामन-सभा का प्रत्येक सदस्य अपने निर्वाचक-संघ का प्रतिनिधि होता है। उसका कर्तव्य है कि सभा में अपने निर्वाचन क्षेत्र के शासन-कार्य के सम्बन्ध में आवश्यक प्रश्न करता रहे। उसे चाहिए कि पार्लिमेंट का अधिवेशन समाप्त होने पर वह अपने निर्वाचन क्षेत्र में जाकर निर्वाचकों को यह समझाये कि पार्लिमेंट में क्या हो रहा है, और उसमें उसने क्या भाग लिया है। उसका यह भी कर्तव्य है कि उन विविध प्रश्नों के सम्बन्ध में जो पार्लिमेंट में पेश होते हैं, या पेश होनेवाले हों, वह अपने निर्वाचकों की राय जानने का यत्न करे। परन्तु उसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उसी राय के अनुसार कामन-सभा में अपना मत देता रहे। हाँ, उसे इस बात का अवश्य ध्यान रखना

होता है कि वह कामन-सभा में जो कार्य करें, वह उसकी निर्वाचन के समय की प्रतिज्ञा के विरुद्ध न हो। परन्तु यदि वह ऐसा कार्य करे, तो उसे कोई रोक नहीं सकता। शासनपद्धति सम्बन्धी कोई नियम ऐसा नहीं है, जो उसे उक्त प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य करे। कभी-कभी तो सदस्य अपना पुराना दल या पार्टी छोड़ कर दूसरे नये दल में आ मिलते हैं। परन्तु जो विवेकशील होते हैं, वे अपने विचार-परिवर्तन के सम्बन्ध में अपने निर्वाचकों की राय जानना आवश्यक समझते हैं। इसलिए वे नाममात्र के कार्यवाली कोई सरकारी नौकरी स्वीकार करके कामन-सभा में पहले अपना स्थान खाली कर देते हैं,* और, फिर सरकारी नौकरी छोड़ देते हैं। पश्चात्, जब उनके निर्वाचक-संघ से पुनः निर्वाचन होता है, तो वे, नवीन दल के सदस्य बनकर, कामन-सभा के लिए उम्मेदवार बन जाते हैं।

'कामन' सभा के पदाधिकारी—'कामन'-सभा के मुख्य पदाधिकारी निम्नलिखित होते हैं:—(१) 'स्पीकर' अर्थात् अध्यक्ष। (२) कमेटियों का सभापति तथा 'कामन'-सभा का उपसभापति, (३) क्लर्क। कामन-सभा का नया चुनाव हो जाने पर, प्रथम अधिवेशन में, सबसे पहले अध्यक्ष का चुनाव होता है। बादशाह इस चुनाव को स्वीकार कर लेता है। 'स्पीकर' सभा का नेता नहीं होता, उसका कार्य केवल सभा को सुचारू रूप से चलाना है। वह किसी प्रस्ताव पर केवल उस समय अपना मत देता है, जब उसपर दोनों पक्ष के मत बराबर हों। वह निश्चय करता है कि किसी प्रस्ताव पर

*निर्वाचित हो चुकने पर कोई व्यक्ति अपने प्रतिनिधि-पद से अस्तीफा नहीं दे सकता; यदि वह कामन-सभा से पृथक् होना चाहे तो उसके लिए कोई सरकारी नौकरी स्वीकार कर लेना आवश्यक है।

बादविवाद बन्द करने का प्रस्ताव किया जाय या नहीं। वह पुनरुक्ति करनेवाले या अप्रासंगिक बात कहनेवाले सदस्य का भाषण बन्द कर सकता है। यदि कोई सदस्य उसकी आज्ञा का पालन न करे तो वह उसे सभा से निकाल सकता है, या उसका कुछ समय तक सभा में आना बन्द कर सकता है। इन विषयों में उसका निर्णय अन्तिम माना जाता है, उसकी कहीं अपील नहीं होती। उसका बहुत आदर किया जाता है। उसे रहने को सरकारी मकान, तथा ५,००० पौंड वार्षिक वेतन मिलता है। अपने कार्य से अवकाश ग्रहण करने पर वह 'लार्ड' बना दिया जाता है।

कमेटियों का सभापति मन्त्री-वर्ग द्वारा नियुक्त किया जाता है। वह सब कमेटियों में अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करता है, और 'कामन'-सभा में उप-सभापति होता है।

क्लर्क स्थायी सरकारी कर्मचारी होता है, यह 'कामन'-सभा के चुनाव के साथ बदलता नहीं। इसका कर्तव्य यह है कि सभा की कार्रवाई की रिपोर्ट रखे, तथा उसे प्रकाशित करे।

'कामन'-सभा की कमेटियाँ—इस सभा की सबसे महत्त्वपूर्ण कमेटी 'पूरी सभा की कमेटी' होती है, इसमें अध्यक्ष का आसन 'स्पीकर' ग्रहण नहीं करता, कमेटियों का सभापति करता है। इस कमेटी में प्रत्येक सदस्य किसी प्रश्न पर एक-से-अधिक बार भी बोल सकता है। कार्य के अनुसार इस कमेटी के भिन्न-भिन्न नाम होते हैं। उदाहरणवत् जब यह कमेटी आगामी वर्ष के खर्च के सम्बन्ध में विचार करती है, इसे खर्च-कमेटी कहते हैं। जब यह आय-प्राप्ति के उपायों अर्थात् करों का विचार करती है, तो इसे आय-साधन-कमेटी ('कमेटी-आफ-वेज़ एन्ड मीन्ज') कहते हैं। जब यह भारत के हिसाब

पर बिचार करती है, तो इसे भारतीय-राजस्व-कमेटी कहते हैं ।

कामन-सभा की अन्य कमेटियों में मुख्य ये हैं :— (१) सिलेक्ट कमेटी—यह आवश्यकतानुसार किसी क़ानूनी मसविदे पर विचार करने के लिए नियुक्त होती है। इसमें १५ सदस्य होते हैं। (२) स्थायी कमेटियाँ—ये छः होती हैं। साधारणतया क़ानूनी मसविदे इन्हीं के पास भेजे जाते हैं। प्रत्येक कमेटी में ६० से ८० तक सदस्य होते हैं। (३) नियुक्ति-कमेटी या कमेटी-आफ़-सिलेक्शन—इस कमेटी को कामन-सभा अपने अधिवेशनके आरम्भमें चुनती है। इसका काम सिलेक्ट कमेटी तथा स्थायी कमेटियों के सदस्यों की नियुक्ति करना है। इसमें ११ सदस्य होते हैं। (४) व्यक्तिगत या 'प्राइवेट' मसविदों की कमेटी। (५) सार्वजनिक हिसाब कमेटी। (६) सार्वजनिक दर्ख़ास्तों की कमेटी। और (७) भोजनालय तथा जलपान की कमेटी।

सिलेक्ट कमेटी को, और व्यक्तिगत मसविदों की कमेटी को उपस्थित मसविदों के सम्बन्ध में गवाह लेने का अधिकार है; अन्य कमेटियों को यह अधिकार नहीं है। जब किसी महत्वपूर्ण मसविदे पर ऐसी सिलेक्ट कमेटी नियुक्तकी जाती है जिसमें'कामन'सभा और 'लार्ड' सभा दोनों के सभासद होते हैं, तो उसे संयुक्त सिलेक्ट कमेटी कहते हैं।

'कामन'-सभा और मन्त्री-वर्ग का सम्बन्ध—जैसा कि हम पहले कह आये हैं, मन्त्री-वर्ग सब शासन-कार्य के लिए 'कामन'-सभा के प्रति उत्तरदायी होता है। सभा के सदस्यों को यह अधिकार है कि वे मन्त्रियों से विविध प्रश्न पूछ सकते हैं, मंत्रियों के कार्यों की आलोचना कर सकते हैं, और प्रस्ताव उपस्थित कर सकते हैं। यदि किसी विभाग का कार्य असन्तोषप्रद हो तो वे उसका ख़र्च कम कर सकते हैं, या उसके मन्त्री का वेतन घटा सकते हैं। ऐसी

परिस्थिति में मन्त्री-वर्ग को अस्तीफ़ा देना होता है।

इतना होने पर भी इंगलैंड में मन्त्री-वर्ग की शक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती जारही है। यदि मन्त्री-वर्ग 'कामन' सभा के ऐसे दल के सदस्यों में से संगठित हुआ हो, जिसकी संख्या इस सभा में साढ़े तीन सौ से अधिक हो तो प्रधान मन्त्री कामन-सभा की परवाह न करके, सब कार्य अपनी इच्छानुसार कर सकता है; इसमें शर्त यह है कि वह कामन-सभा में अपने दल के सदस्यों की एकता बनाये रख सके, और उन्हें दूसरे दल में सम्मिलित होने से रोक सके।

'लार्ड'-सभा

दूसरी सभा की आवश्यकता—कुछ सज्जनों का मत तो यह है कि देश में व्यवस्था-कार्य के लिए एक ही सभा (जनसाधारण सभा) का होना पर्याप्त है; क्योंकि यदि दूसरी सभा रहेगी तो दो में से एक बात होगी, यह दूसरी सभा या तो जनसाधारण-सभा से सहमत होगी, या उसका विरोध करेगी। पहली दशा में यह सभा अनावश्यक प्रमाणित होगी, और दूसरी दशा में केवल बाधा-स्वरूप होगी। इस लिए इस मत के अनुसार दूसरी सभा नहीं होनी चाहिए।

इसके विपरीत, अन्य राजनीतिज्ञों का मत है कि किसी देश में कानून बनाने की शक्ति एक ही सभा के हाथ में न रहने देना चाहिए। किसी नियम के व्यवहार में आने से पूर्व उसके विषय में दूसरी सभा का निर्णय जान लेना चाहिए। इससे और कुछ नहीं, तो यह लाभ तो होगा ही कि जल्दबाज़ी न हो सकेगी, तथा पहली सभा उतनी स्वच्छन्द और अभिमानी न होगी, जितनी दूसरी सभा के अभाव में, हर समय अपनी विजय का विश्वास रखने की दशा में, उसका होजाना सम्भव है। आज-कल कितने ही देश इस सिद्धान्त को ध्यान में रखते

है कि दूसरी सभा शासन-नीति की उचित रक्षा करते हुए ऐतिहासिक शृंखला बनाये रखे और आकस्मिक परिवर्तन न होने दे।

इंगलैण्ड का अनुभव—सतरहवीं शताब्दी के मध्य में इंगलैंड ने एक सभा से काम चलाने की पद्धति की परीक्षा की थी। जैसा अन्यत्र कहा गया है, सन् १६४९ ई० में बादशाह के पद का अन्त कर दिया गया था। उसी समय 'लार्ड'-सभा भी अनावश्यक ठहरादी थी। इंगलैंड ने बिना बादशाह, और केवल एक ही व्यवस्थापक सभा द्वारा राजकार्य चलाने का ग्यारह वर्ष अनुभव किया, परन्तु अन्ततः यह अनुभव सन्तोषप्रद तथा उत्साह-वर्द्धक न रहा और उसे, बादशाह तथा लार्ड-सभा, दोनों को पुनःस्थापित करना पड़ा।

यह नहीं कहा जा सकता कि यहाँ इस दूसरी सभा के सदस्य ऐसे सुयोग्य अनुभवी, और सार्वजनिक हिताभिलाषी हैं, जैसे वे वास्तव में होने चाहिएँ। अधिकांश लार्ड बड़े ज़मींदार या धनी व्यापारी आदि होने के कारण आलसी, ऐश्वर्य-प्रेमी और अनुदार हैं; वे सुधारों का विरोध करना और जैसे-बने अपने व्यक्तिगत तथा पारिवारिक (या सामाजिक) अधिकारों की रक्षा करना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। परन्तु 'कामन'-सभा के सदस्यों का भी तो आचार-व्यवहार इतना उन्नत नहीं है, जितना कि वह उस दशा में होना अत्यन्त आवश्यक है, जब कि एक ही सभा द्वारा निश्चित की हुई व्यवस्था यथेष्ट उपयोगी हो सके। इस लिए यहाँ 'लार्ड'-सभा चली आरही है, और कुछ सीमा तक उपयोगी भी समझी जाती है।

'लार्ड'-सभा का संगठन—कोई व्यक्ति निम्नलिखित कारणों से इस सभा का सदस्य बनता है:— (१) वंशानुगत अधिकार से, (२) बादशाह द्वारा 'लार्ड' बनाया

जाने से, (३) 'आर्कविशप' (प्रधान लाट-पादरी) आदि होने से; ये दो होते हैं, (४) विशप (लाट-पादरी) होने से; ये २४ होते हैं, (५) जन्म भर के लिए निर्वाचित होने से; ये आयर्लैंड के २८ लार्ड होते हैं, (६) पार्लिमेंट की अवधि तक के लिए निर्वाचित होने से; ये स्काटलैंड के १६ लार्ड होते हैं। लार्ड-सभा के कुल सदस्यों की संख्या लगभग ७४० होती है, परन्तु इनमें से मत देने वाले प्रायः ७२० होते हैं। उपर्युक्त हिसाब से यह स्पष्ट है कि इस सभा में विशेष अधिकार उन्हीं लोगों को होता है जो वंशागत होते हैं, निर्वाचित नहीं होते। ये प्रायः स्वभाव से ही परिवर्तन-विरोधी होते हैं।

नये 'लार्ड' केवल बादशाह ही बना सकता है। सब 'लार्ड' परम्परागत रहते हैं। इस पद का कोई त्याग नहीं कर सकता। निम्नलिखित व्यक्ति लार्ड-सभा के सदस्य नहीं हो सकतेः—(१) स्त्रियाँ, (२) नाबालिग, (३) विदेशी, (४) दिवालिये, और (५) राजद्रोह या किसी घोर अपराध के अपराधी।

सदस्यों के विशेषाधिकार—इस सभा के सदस्यों के विशेषाधिकार निम्नलिखित हैंः—(क) लार्ड-सभा में भाषण-स्वातंत्र्य (ख) पार्लिमेंट का अधिवेशन आरम्भ होने से चालीस दिन पहले से लेकर, अधिवेशन समाप्त होने के चालीस दिन बाद तक, किसी दिवानी मामले में गिरफ़्तार न हो सकना। (ग) सार्वजनिक विषय की बात करने के लिए बादशाह से मिलना, और, (घ) राजद्रोह या अन्य घोर अपराध लगाया जाय, तो उसकी लार्ड सभा द्वारा ही जांच होना।

शासन सम्बन्धी अधिकार—'लार्ड'-सभा को धन सम्बंधी कानून मसविदों पर कोई अधिकार न होने के कारण उसे मन्त्री-वर्ग

पर भी कोई नियन्त्रण-अधिकार नहीं है। मन्त्री-वर्ग अपने शासन-कार्य के लिए कामन-सभा के प्रति उत्तरदायी है, 'लार्ड'-सभा के प्रति नहीं। यद्यपि 'लार्ड'-सभा का प्रत्येक सदस्य किसी भी शासन-कार्य के सम्बन्ध में प्रश्न पूछ सकता है, परन्तु उसका विशेष महत्व नहीं रहता। यदि मन्त्रिमण्डल किसी प्रस्ताव के सम्बन्ध में 'लार्ड'-सभा में हार जाय तो उसे अस्तीफ़ा देने की आवश्यकता नहीं होती। तथापि लार्ड-सभा का शासन-कार्य में गौण रूप से काफ़ी प्रभाव रहता है। मन्त्रिमण्डल के कई सदस्य लार्ड-सभा के सदस्य होते हैं, और उन पर इसका प्रभाव पड़ता ही रहता है।

'लार्ड'-सभा का सुधार—जैसा कि पहले कहा जा चुका है, 'लार्ड' सभा के अधिकांश सदस्य वंशागत होते हैं। इसलिए इस सभा को देश की किसी श्रेणी के लोगों की प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता। इसके सदस्यों की संख्या भी काफ़ी अधिक है; और, जैसे-जैसे नये लार्ड बनाये जायँगे, इनकी संख्या बढ़ते रहने की सम्भावना है। डेढ़ सौ वर्ष पहले इनकी संख्या लगभग दो सौ के थी, यह संख्या क्रमशः बढ़ते-बढ़ते अब सात सौ के ऊपर पहुँच गयी है।

सन् १९११ ई० के कानून में यह निश्चय किया गया था कि इस सभा के सदस्य प्रतिनिध्यात्मक सिद्धान्तों पर चुने जाया करें, परन्तु अभी तक इस सम्बन्ध में कोई ऐसी योजना तैयार नहीं हो पायी है जो सब दलों को मान्य हो। समस्या बहुत जटिल है। यदि इस सभा के सदस्य निर्वाचित रखे जायँ तो यह प्रश्न उपस्थित होता है कि उन्हें निर्वाचन करने के लिए किस योग्यता वालों को मताधिकार दिया जाना चाहिए। जब लार्ड-सभा निर्वाचित सदस्यों की सभा होगी, तो वह धन सम्बन्धी कानूनी मसविदों पर अधिकार रखना तथा मन्त्रियों का नियन्त्रण

करना भी चाहेगी। कामन-सभा इसे ये अधिकार देना पसन्द न करेगी। दोनों सभाओं के कार्य में बड़ी उलझन पड़ जायगी। इन कठिनाइयों के कारण लार्ड-सभा के सङ्गठन-सुधार सम्बन्धी कोई प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हो पाता।

सातवाँ परिच्छेद

पार्लिमेंट की कार्य-पद्धति

पार्लिमेंट के संगठन का वर्णन कर चुकने पर अब हम इसकी कार्य-पद्धति बतलाते हैं। पहले 'कामन'-सभा की बात लें।

'कामन'-सभा के सदस्यों की न्यूनतम संख्या—'कामन'-सभा का काम करने के लिए, सदस्यों की न्यूनतम संख्या चालीस निर्द्धारित की गयी है, अर्थात् चालीस सदस्यों का 'कोरम' होता है। कभी-कभी उपस्थिति चालीस से भी कम होती है। जब कभी कोई सदस्य 'स्पीकर' या अध्यक्ष का ध्यान इस कमी की ओर आकर्षित करता है तो दो मिनट तक सम्पूर्ण भवन में एक-साथ बिजली की घण्टी बजती है, और ऐसे सदस्य जो इधर-उधर कमरों में बैठे होते हैं, सभा-भवन में आकर उपस्थित होजाते हैं।

मत गिनने की शैली—जब किसी प्रस्ताव के पक्ष या विपक्ष में सदस्यों की संख्या गिननी होती है तो निम्नलिखित शैली से काम किया जाता है। 'अध्यक्ष' प्रस्ताव को प्रश्न के रूप में उपस्थित करता है और कहता है कि जो सदस्य इसके पक्ष में हों, वे 'हाँ' कहें और जो इसके विपक्ष में हों, वे 'नहीं' कहें। सदस्य अपनी इच्छा के

अनुसार 'हाँ' या 'नहीं', कहते हैं। 'अध्यक्ष' इन मतों को सुनकर कहता है कि मेरे विचार से बहुमत 'हाँ' के पक्ष में हैं, (या 'नहीं' के पक्ष में है)। यदि कोई सदस्य इसका का विरोध करता है तो पक्ष और विपक्ष के मतों का गिनना आरम्भ होता है। समस्त भवन में दो मिनट घण्टी बजती है और जो सदस्य इधर-उधर कमरों में बैठे होते हैं, वे सभा-भवन में आकर उपस्थित हो जाते हैं। इस पर 'अध्यक्ष' प्रस्ताव को पुनः प्रश्न के रूप में रखता है; जो सदस्य उसके पक्ष में होते हैं, वे 'हाँ' कहते हैं और जो विपक्ष में होते हैं, वे 'नहीं' कहते हैं। तब अध्यक्ष फिर कहता है कि मेरे विचार से बहुमत 'हाँ' के पक्ष में है (या 'नहीं' के पक्ष में है)।

यदि कोई सदस्य इसका विरोध करे तो 'अध्यक्ष' कहता है कि जो 'हाँ' के पक्ष में हों, वे दाहिने कमरे में जायँ, और जो 'नहीं' के पक्ष में हों, वे बायें कमरे में जायँ। प्रत्येक कमरे के दरवाजे पर दो-दो गिननेवाले रहते हैं। इनमें से एक सरकारी पक्ष का होता है और दूसरा विरोधी दल का। जब सदस्य इन कमरों में जाते हैं तो उनके नाम क्लर्क द्वारा लिख लिये जाते हैं। अन्त में गिननेवाले व्यक्ति अध्यक्ष को पक्ष और विपक्ष के सदस्यों की संख्या बतलाते हैं, और वह इसके अनुसार प्रस्ताव के, बहुमत से, स्वीकृत या अस्वीकृत होने के सम्बन्ध में, अपना अन्तिम निर्णय देता है।

सभा के अधिवेशन; बादशाह का भाषण—कामन-सभा के नवीन निर्वाचन के पश्चात् 'अध्यक्ष' का चुनाव हो जाने पर पहिला कार्य यह होता है कि प्रत्येक सदस्य राजभक्ति की शपथ ले। 'कामन'-सभा का प्रत्येक वर्ष का प्रथम अधिवेशन फ़रवरी के आरम्भ में होने लगता है। बादशाह 'लार्ड'-सभा के भवन में अपना भाषण

देता है, इसे सुनने के लिए 'कामन'-सभा के सदस्य वहाँ बुलाये जाते हैं। यह भाषण बहुत महत्व का होता है, इसके द्वारा मंत्रिमण्डल पार्लिमेंट को अपनी शासन सम्बन्धी नीति की सूचना देता है, और यह बतलाता है कि उसका, उस वर्ष में, क्या-क्या महत्व-पूर्ण कार्य करने का विचार है।

पीछे बादशाह का यह भाषण 'कामन'-सभा में अध्यक्ष द्वारा पढ़ा जाता है। कोई मंत्री यह प्रस्ताव उपस्थित करता है कि बादशाह को उसके भाषण के लिए धन्यवाद दिया जाय। विरोधी दल के सदस्य इस प्रस्ताव पर संशोधन उपस्थित करते हैं, जिसमें वे यह बतलाते हैं कि सरकार कौन-कौनसा आवश्यक कार्य करना नहीं चाहती और कौन-कौनसा कार्य ऐसा कर रही है, जो अनावश्यक है। इन संशोधनों पर विचार करने में दो-तीन सप्ताह लग जाते हैं। यदि विरोधी दल का कोई संशोधन बहुमत से स्वीकार हो जाय तो इसका आशय यह होता है कि कामन-सभा मंत्रिमंडल की शासन-नीति से सहमत नहीं है। इस दशा में मंत्रिमंडल को अस्तीफ़ा देना होता है।

सभा की बैठक—कामन-सभा की बैठक सोमवार, मंगलवार, बुधवार और गुरुवार को साधारणतः पौने तीन बजे से साढ़े ग्यारह बजे रात तक होती हैं; यदि कोई बहुत ही आवश्यक कार्य हो तो इसके इसके बाद भी जारी रहती हैं। बैठक सवा आठ बजे से साढ़े आठ बजे तक जलपान के लिए स्थागित होती है। इस प्रकार उक्त दिनों में दो-दो बैठकें होती हैं। शुक्रवार के दिन बैठक केवल ५॥ बजे तक ही रहती है। शनिवार और रविवार को बैठक नहीं होती।

सभा का कार्य; प्रश्न और प्रस्ताव—सभा का कार्य

आरम्भ होने से पहले, प्रतिदिन प्रार्थना होती है। पश्चात् अध्यक्ष अपना स्थान ग्रहण करता है, और जनता की दरखास्तें पेश की जाती हैं। यह कार्य तीन बजे तक समाप्त हो जाता है और तब प्रश्न पूछने का कार्य आरम्भ होता है। इस कार्य के लिए चालीस मिनट का समय निर्धारित है। जिन प्रश्नों का उत्तर पौने चार बजे तक नहीं दिया जा सकता, वे रिपोर्ट में अन्य कार्रवाई के साथ प्रकाशित किये जाते हैं। सदस्यों को प्रश्न पूछने की सूचना पहले से देनी होती है। प्रत्येक सदस्य किसी प्रश्न के सम्बन्ध में पूरक प्रश्न पूछ सकता है। यदि किसी प्रश्न का उत्तर संतोषप्रद न हो और वह विषय जनता के लिए तत्काल आवश्यक हो, तो कोई सदस्य यह प्रस्ताव कर सकता है कि उस पर विचार करने के लिए सभा का कार्य स्थगित कर दिया जाय। यदि यह प्रस्ताव उस समय स्वीकार हो जाय, तो उस विषय पर उसी दिन साढ़े आठ बजे बहस शुरू हो जाती है। साधारणतया चार बजे बाद प्रस्तावों और मसविदों पर विचार होता है। साल भर में 'कामन'-सभा प्रायः सौ दिन काम करती है, अर्थात् उसकी लगभग दो सौ बैठकें होती हैं। इनमें से अधिकतर बैठकों में वह काम होता है, जो मंत्रिमंडल द्वारा उपस्थित किया जाता है। प्रायः तीस बैठकें ही ऐसी होती हैं, जिनमें अन्य सदस्य अपने प्रस्ताव या कानूनी मसविदे उपस्थित कर सकते हैं।

गैर-सरकारी सदस्यों द्वारा बहुत-से प्रस्तावों और कानूनी मसविदों की सूचना आती है, परन्तु समय की कमी के कारण उन सब पर विचार होना असम्भव होता है। इसलिए किन प्रस्तावों या कानूनी मसविदों पर विचार होना चाहिए तथा किस क्रमसे विचार होना चाहिए, इसका निश्चय चिट्ठी डालकर अर्थात् 'बेलट' द्वारा किया जाता है।

कानून कैसे बनते हैं ?; सार्वजनिक कानूनी मसविदे–कानूनी मसविदे तीन प्रकार के होते हैं:—(१) सार्वजनिक (धन सम्बन्धी छोड़कर), (२) धन सम्बन्धी, और (३) स्थानीय तथा व्यक्तिगत कानूनी मसविदे।

सार्वजनिक कानूनी मसविदा, कोई भी सदस्य उपस्थित कर सकता है; यदि मन्त्रिमण्डल का कोई सदस्य उपस्थित करना चाहे तो उसके लिए दिन का निश्चय आसानी से हो जाता है अन्य सदस्य को उसका अवसर तभी मिलेगा जब चिट्ठी डालकर अर्थात् 'बेलट' द्वारा उसका निश्चय हो जाय। प्रत्येक सदस्य को, कानूनी मसविदा उपस्थित करने की सूचना कुछ निर्दिष्ट समय पहले देनी होती है, सूचना के साथ ही कानूनी मसविदा भी भेजना होता है।

नियत किये हुए दिन, सदस्य यह प्रस्ताव करता है कि उसे उसका मसविदा उपस्थित करने की अनुमति दी जाय। इस प्रस्ताव पर बहस नहीं होती; कभी-कभी तो केवल मसविदे का शीर्षक ही पढ़ दिया जाता है और अनुमति मिल जाती है। इसे मसविदे का 'प्रथम वाचन' (फर्स्ट रीडिंग) कहते हैं।

यह कार्य समाप्त होने पर उसके 'द्वितीय वाचन' (सेकिण्ड रीडिङ्ग) के लिए तारीख निश्चय कर दी जाती है। उस निश्चित दिन सदस्य यह प्रस्ताव करता है कि मसविदा दूसरी बार पढ़ा जाय। इस समय मसविदे के सिद्धान्त पर वादविवाद होता है, परन्तु कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया जा सकता। यदि प्रस्ताव उस समय स्वीकार न हुआ तो कुछ दिन बाद फिर वह प्रस्ताव रखा जाता है। जो सदस्य यह चाहते हैं कि मसविदे पर विचार ही न किया जाय, वह यह प्रस्ताव करते हैं कि यह मसविदा छः मास बाद दूसरी बार पढ़ा जाय।

यदि यह प्रस्ताव स्वीकार हो जाय, तो उस समय उस मसविदे सम्बन्धी सब काम बन्द कर दिया जाता है।

द्वितीय वाचन का प्रस्ताव स्वीकार होने पर मसविदा साधारणतः स्थायी कमेटी के पास विचारार्थ भेजा जाता है। 'कामन'-सभा यदि चाहे तो उसे 'पूरी सभा की कमेटी' के पास भी भेज सकती है। यदि मसविदा बहुत महत्त्वपूर्ण हो तो स्थायी कमेटी या 'पूरी सभा की कमेटी' के पास भेजे जाने से पूर्व, वह 'कामन'-सभा के आदेशानुसार 'सिलेक्ट कमेटी' के पास भेजा जाता है। यह कमेटी उसकी प्रत्येक धारा पर, उसके सम्बन्ध में गवाही देने वालों के वक्तव्य पर विचार करके, अपनी रिपोर्ट देती है। स्थायी कमेटी या 'पूरी सभा की कमेटी' में मसविदे की प्रत्येक धारा पर विचार होता है, और संशोधन उपस्थित किये जाकर स्वीकृत या अस्वीकृत किये जाते हैं। मसविदे के इस कार्य को कमेटी-मंजिल (कमेटी-स्टेज) कहते हैं। इसके तय हो जाने पर, मसविदा कामन-सभा में फिर पेश किया जाता है, और वहाँ फिर प्रत्येक धारा तथा उसके संशोधन पर विचार किया जाता है। इसे रिपोर्ट-मन्जिल (रिपोर्ट-स्टेज) कहते हैं।

सब धाराओं पर विचार हो चुकने के पश्चात् यह प्रस्ताव किया जाता है कि यह संशोधित मसविदा स्वीकार किया जाय। इसे मसविदे का 'तीसरा वाचन' (थर्ड रीडिंग) कहा जाता है। इस समय कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया जाता। प्रस्ताव स्वीकार होने पर 'कामन'-सभा सम्बन्धी सब मंजिलें पूरी हो जाती हैं, और मसविदा 'लार्ड'-सभा*

*'लार्ड' सभा का कार्य ४॥ बजे आरम्भ होता है, और ८ बजे तक समाप्त हो जाता है। इस सभा में काम करने के लिए सदस्यों की न्यूनतम संख्या तीन रखी गयी है। परन्तु किसी क़ानूनी मसविदे पर विचार करने के लिए तीस सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक होती है।

में भेजा जाता है।

'लार्ड'-सभा का सम्बन्ध—'लार्ड'-सभा में भी उपर्युक्त प्रकार से मसविदे का प्रथम वाचन, द्वितीय वाचन, कमेटी मंजिल, रिपोर्ट मंजिल, और तीसरा वाचन होता है। यदि मसविदा 'लार्ड'-सभा द्वारा ठीक उसी रूप में स्वीकार हो जाय जिस रूप में वह 'कामन'-सभा में स्वीकार हुआ है, तो वह बादशाह के पास स्वीकृति के लिए भेजा जाता है, और उसकी स्वीकृति मिलने पर वह कानून का रूप धारण करता है।

यदि 'लार्ड'-सभा ने कानून के मसविदे में कुछ संशोधन किये तो उन संशोधनों पर विचार करने के लिए वह मसविदा 'कामन'-सभा में लौटाया जाता है; यदि 'कामन'-सभा संशोधनों को स्वीकार कर ले तो मसविदा बादशाह के पास स्वीकृति के लिए भेजा जाता है।

यदि 'कामन'-सभा 'लार्ड'-सभा के संशोधनों को अस्वीकार करदे और 'लार्ड'-सभा उनके लिए आग्रह करे, तो उस अधिवेशन (सेशन) में उस मसविदे सम्बन्धी कारवाई बन्द कर दी जाती है, और दूसरे अधिवेशन में वह मसविदा कामन-सभा में उसी रूप में उपस्थित किया जाता है और वहाँ उपर्युक्त सब मंजिलें तय करके 'लार्ड'-सभा में पहुँचता है। यदि 'लार्ड'-सभा ने फिर वैसे ही संशोधन उपस्थित किये तो उस अधिवेशन में भी उस मसविदे के आगे की कारवाई बन्द कर दी जाती है, और तीसरे अधिवेशन में मसविदा पुनः कामन-सभा में उपस्थित किया जाता है और वहाँ सब मंजिल तय करके फिर 'लार्ड'-सभा में पहुंचता है। इस बार चाहे लार्ड-सभा उसमें संशोधन उपस्थित भी करे, वह बादशाह के पास स्वीकृति के लिए उसी रूप में भेजा जाता है जिस रूप में वह कामन-सभा द्वारा तीसरी बार स्वीकृत हुआ

था। इसमें शर्त यह है कि इस बीच में दो वर्ष का समय व्यतीत हो गया हो। बादशाह द्वारा स्वीकृत हो जाने पर मसविदे को कानून का रूप मिल जाता है।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि 'लार्ड'-सभा धन सम्बन्धी छोड़कर अन्य सार्वजनिक कानूनी मसविदों को अधिक-से-अधिक दो वर्ष तक कानून बनने से रोक सकती है। उसके पश्चात् उसके विरोध करने पर भी, कामन-सभा द्वारा तीन बार स्वीकृत किये जाने पर मसविदा कानून बन जाता है। कामन-सभा का, लार्ड-सभा का विरोध होते हुए भी, कानून बनाने का यह अधिकार सन् १९११ ई० के कानून से मिला हुआ है।

धन सम्बन्धी कानूनी मसविदे; (क) खर्च सम्बन्धी—न धसम्बन्धी कानूनी मसविदे दो प्रकार के होते हैं, (क) खर्च संबधी मसविदे ['कन्सोलिडेटेड फड्स बिल'] और (ख) कर सम्बन्धी मसविदे [फाइनेन्स बिल]। पहले हम खर्च सम्बन्धी मसविदों पर विचार करते हैं।

प्रति वर्ष मार्च मास के आरम्भ में, ख़र्च सम्बन्धी पूरी सभा की कमेटीमें खर्च की मदों के प्रस्तावोंपर विचार किया जाता है। ये प्रस्ताव मत्रियों द्वारा किये जाते हैं। कोई भी सदस्य किसी मद में से ख़र्च की रकम कम करने का संशोधन उपस्थित कर सकता है। जब ख़र्च सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकृत होजाते हैं तो 'आय-साधन कमेटी' में यह प्रस्ताव किया जाता है कि ख़र्च-कमेटी ने जो खर्च मंजूर किया है, उसकी रकम सरकारी कोष से दी जाय। इन प्रस्तावों को क़ानून का रूप देने के लिए 'कामन'-सभा में ख़र्च सम्बन्धी क़ानूनी मसविदा उपस्थित किया जाता है, और वह अन्य सार्वजनिक कानूनी मसविदों

के समान, विविध मंज़िलें तय करके लार्ड-सभा में पहुंचता है। इस सभा में भी वह सब मजिलें तय करता है और लार्ड-सभा द्वारा संशोधित किये जाने पर भी, वह बादशाह के पास स्वीकृति के लिए उसी रूप में जाता है, जिसमें वह 'कामन'-सभा द्वारा स्वीकृत हुआ है।

(ख) कर सम्बन्धी कानूनी मसविदे—अप्रेल मास के आरम्भ में, 'आय-साधन कमेटी' में, अर्थ-मंत्री सरकारी आय-व्यय का अनुमानपत्र उपस्थित करता है और करों की दर घटाने-बढ़ाने के, या नये कर लगाने के प्रस्ताव उपस्थित करता है। कोई भी सदस्य कर की दर घटाने के संशोधन उपस्थित कर सकता है। प्रस्तावों और संशोधनों पर क्रमशः विचार होता है, और जो प्रस्ताव स्वीकृत किये जाते हैं, उन्हें कानून का रूप देने के लिए कर सम्बन्धी कानूनी मसविदा उपस्थित किया जाता है, और वह अन्य सार्वजनिक मसविदों के समान विविध मंज़िलें तय करके लार्ड-सभामें पहुँचता है और इस सभा में भी वह सब मंज़िलें तय करता है। लार्ड-सभा द्वारा संशोधित किये जाने पर भी, वह बादशाह के पास स्वीकृति के लिए उसी रूप में भेजा जाता है जिस में वह कामन-सभा द्वारा स्वीकृत हुआ है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'लार्ड'-सभा धन सम्बन्धी कानूनी मसविदों में कोई परिवर्तन नहीं कर सकती, चाहे वह मसविदे ख़र्च सम्बन्धी हों, या कर सम्बन्धी। परिवर्तन करने का अधिकार लार्ड-सभा से सन् १९११ ई० के कानून से ले लिया गया है।

स्थानीय या व्यक्तिगत कानूनी मसविदे—स्थानीय या व्यक्तिगत कानूनी मसविदा उसे कहते हैं जिसका सम्बन्ध सर्व-साधारण से न होकर किसी ख़ास स्थान से हो, और जिसके द्वारा

किसी कम्पनी आदि को विशेष अधिकार दिये जायँ। जो सदस्य इस प्रकार का कानूनी मसविदा उपस्थित करना चाहता है, उसे निर्धारित नियमों के अनुसार एक दरखास्त देनी होती है। इस दरखास्त की जाँच ख़ास अफ़सरों द्वारा की जाती है। यदि यह नियमानुसार ठीक समझी जाय तो कामन-सभा में उसका प्रथम वाचन होना है, तब मसविदे की शैली की जाँच होती है और द्वितीय वाचन किया जाता है। फिर मसविदा स्थानीय मसविदों की कमेटी के पास भेजा जाता है और उसकी प्रत्येक धारा पर विचार होता है। यह कमेटी गवाहों के वक्तव्यों पर विचार करती है। पश्चात् इस कमेटी की रिपोर्ट पर, 'कामन'-सभा विचार करती है। इसके बाद मसविदे का तीसरा वाचन होकर वह 'लार्ड' सभा में भेजा जाता है और वहाँ सब मंज़िलें तय कर चुकने पर वह बादशाह के पास स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। परन्तु यदि लार्ड-सभा ने इस में कोई ऐसा संशोधन उपस्थित कर दिया हो जो 'कामन'-सभा को स्वीकार न हो, तो मसविदे पर आगे कोई कार्रवाई नहीं की जाती।

इस तरह के कानून बनाने में बहुत रुपया खर्च होता है। पहले तो दरखास्त के साथ ही कुछ फीस देनी होती है, फ़िर मसविदा बनानेवाले को तथा उसे कामन-सभा में उपस्थित करनेवाले को भी काफी फ़ीस दी जाती है। कमेटी के सामने गवाही दिलाने में भी कुछ रुपया खर्च हो जाता है। इसलिए ऐसे मसविदे बहुत कम उपस्थित किये जाते हैं।

इस परिच्छेद को समाप्त करने से पूर्व कमीशन और कमेटियों का भी उल्लेख कर देना आवश्यक है।

कमीशन और कमेटियाँ—किसी विषय का यथेष्ट कानून

बनाने के लिए यह आवश्यक है कि तत्कालीन परिस्थिति का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करके उसका मसविदा बनाया जाय। इसलिए सामयिक समस्याओं पर विचार करने के लिए समय-समय पर शाही कमीशन नियत किया जाता है, जिसके सदस्य तत्कालीन सरकार (मन्त्रिमंडल) द्वारा नियुक्त होते हैं। इसे प्रस्तुत विषय के सम्बन्ध में योग्य पुरुषों के बयान या गवाही लेने का अधिकार होता है। कमीशन की जाँच का हाल एक रिपोर्ट में दर्ज किया जाता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि सब सदस्य एक मत नहीं होते, उनमें से कुछ अपनी मतभेद-पत्रिका अलग देते हैं, या कुल सदस्यों की दो रिपोर्टें हो जाती हैं, एक अल्पमत-रिपोर्ट, दूसरी बहुमत-रिपोर्ट। कमीशन की रिपोर्ट (या रिपोर्टों) में वे सिफारिशें भी होती हैं, जिनके आधार पर भावी कानून बनना चाहिए। इस प्रकार कानून बनानेवालों को, शासकों को, तथा शासनपद्धति अध्ययन करनेवाले विद्यार्थियों को बहुत उपयोगी सामग्री मिल जाती है।

आवश्यकता होने पर किसी राजनैतिक विषय सम्बन्धी कुछ ज्ञान प्राप्त करने के लिए पार्लिमेंट कुछ सज्जनों की कमेटी भी नियत कर सकती है। भिन्न-भिन्न सरकारी विभाग भी कभी-कभी कोई कमीशन नियत कर सकते हैं। आधुनिक काल के बहुत से स्थायी सरकारी विभाग समय-समय पर नियुक्त किये हुए जांच-कमीशनों के परिणाम-स्वरूप स्थापित हुए हैं।

आठवाँ परिच्छेद

शासन-नीति-विकास

जब एक बार स्वाधीनता का संग्राम छिड़ जाता है तो पीढ़ियों तक रक्तपात पूर्वक चलता रहता है। चाहे अनेक बार घबराहट हो, अन्त में विजय-प्राप्ति अवश्यम्भावी है। —लार्ड बाइरन

पहले यह बताया जा चुका है, कि ब्रिटिश संयुक्त राज्य में, आरम्भ में शासन-अधिकार बहुत-कुछ बादशाह को था, प्रजा को बहुत कम अधिकार था; अब स्थिति इसके बिलकुल विपरीत है, बादशाह को नाममात्र के अधिकार हैं, प्रजा-प्रतिनिधि ही सब शासन-कार्य का संचालन और नियन्त्रण करते हैं। यह परिवर्तन किस प्रकार हुआ, क्या-क्या मंजिलें तय की गयीं, उपस्थित कठिनाइयाँ किस तरह हल हुईं, इन बातों का विचार इस परिच्छेद में करना है।

महान अधिकार-पत्र—छठे परिच्छेद में यह बताया जा चुका है कि किस प्रकार प्रजा ने पहले-पहल कुछ विशेष अधिकार 'मेगना चार्टा' (महान अधिकार-पत्र) द्वारा, सन् १२१५ ई० में प्राप्त किये थे। इसकी कुछ धारायें इस प्रकार थीं:—

१—सभा की अनुमति बिना कोई कर नहीं लगाया जायगा।

२—गैर-कानूनी ढङ्ग से किसी की जान-माल या वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर अधिकार न किया जायगा, किसी निरपराधी व्यक्ति को गिरफ़्तार या कैद नहीं किया जायगा, किसी को कानून की रक्षा से वंचित नहीं किया जायगा। सब के प्रति जाति के नियमों के अनुसार, जूरी द्वारा समान न्याय किया जायगा।

इस अधिकार-पत्र में और भी बहुत-सी महत्वपूर्ण बातें थीं। परन्तु सब का मूल यह था कि, (क) बादशाह अपने कार्यों में प्रजा की

सम्मति लेने को बाध्य हो, तथा देश का राजप्रबन्ध प्रजा की इच्छा के अनुसार हुआ करे, और (ख) प्रजा एक आदमी (बादशाह) के बजाय कानून द्वारा शासित होने लगे। इन दो सिद्धान्तों के आधार पर पीछे बहुत-से कानून बने हैं; अतः यह अधिकार-पत्र ब्रिटिश नागरिकों के भावी स्वत्वों की आधार-शिला कहा जा सकता है।

पार्लिमेंट और बादशाह के अधिकार—तेरहवीं, चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी में पार्लिमेंट ने कई प्रकार के राजनैतिक अधिकार प्राप्त किये। इसने एडवर्ड द्वितीय, रिचर्ड द्वितीय, (तथा पीछे रिचर्ड तृतीय और चार्ल्स प्रथम) से उनके मनमाने कार्यों के लिए जवाब तलब किया। इसका परिणाम यह हुआ कि इंगलैंड का शासन, क्रमशः परिमित या वैध राजतन्त्र हो गया।

सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक लोगों को जैसे-तैसे युद्धों से छुटकारा पाने की चिन्ता थी। उन्हें शान्ति की, तथा अपना जीवन निर्वाह करने के उपायों की, खोज थी। इन्हें प्राप्त कर, वे सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में राजनैतिक अधिकारों को प्राप्त करने की ओर ध्यान देने लगे। ट्यूडर वंश के शासकों, और विशेषतया महारानी ऐलिजबेथ ने बुद्धिमानी से राज्य करके प्रजा के सुख की सामग्री एकत्र की, और अन्य देशों को परास्त किया। इसलिए लोगों का इनसे विशेष विरोध न हुआ। परन्तु शिक्षा और व्यापार की क्रमशः वृद्धि होने पर लोगों में स्वतन्त्रता के भावों का उदय हुआ और परिणाम-स्वरूप सतरहवीं शताब्दी में स्टुअर्ट वंश के स्वेच्छाचारी बादशाहों से स्वत्वाभिलाषी पार्लिमेंट का खूब संघर्ष हुआ।

पारस्परिक संघर्ष—बादशाहों ने व्यापार पर कर लगाये और जबरदस्ती ऋण भी लिया, परन्तु काम चलता न देख, इन्होंने बारबार

पार्लिमेंट की शरण ली। जब पार्लिमेंट ने इनकी इच्छानुसार धन देना या कर लगाना स्वीकार न किया तो इन्होंने उसे विसर्जन कर दिया। इस प्रकार धन की समस्या बराबर बनी रही। चार्ल्स प्रथम ने तीसरी बार सन् १६२७ ई० में पार्लिमेंट का अधिवेशन कराया, तो पार्लिमेंट ने अधिकारों का आवेदन-पत्र ('पिटीशन-आफ-राइट्स') उपस्थित कर दिया, जिसकी मुख्य धारायें ये थीं:—

(१) जब तक पार्लिमेंट की स्वीकृति न मिले, बादशाह किसी को कर या ऋण देने के लिए वाध्य नहीं कर सकता।

(२) बादशाह किसी आदमी को क़ैद नहीं कर सकता, जब तक कि वह ऐसा करने का कारण न बतादे, जिससे वह आदमी न्यायाधीशों द्वारा अपना निर्णय करा सके।

चार्ल्स को अपनी इच्छा न होते हुए भी ये बातें स्वीकार करनी पड़ीं। अधिकारों का आवेदन-पत्र कानून बन गया। और, बादशाह को अभीष्ट धन प्राप्त होगया। परन्तु इसके बाद उसने ग्यारह वर्ष (सन् १६२६—४०) तक बिना पार्लिमेंट के शासन किया। पश्चात् जब पार्लिमेंट का अधिवेशन हुआ तो उसने ग़ैर-कानूनी कर बन्द कर दिये तथा कई उपयोगी नियम बनाये।

प्रजा की विजय—सन् १६४१ ई० में 'कामन'-सभा ने महान विरोध-पत्र (ग्रांड रिमांस्ट्रेंस) उपस्थित किया, इसमें एक मांग यह भी थी कि जब तक पार्लिमेंट स्वीकार न करे, मन्त्रियों की नियुक्ति न की जाय। बादशाह के अवहेलना करने पर, उसका पार्लिमेंट से युद्ध हुआ, जिसमें बादशाह को परास्त होना, और अन्ततः मुक़दमा चलने पर न्यायाधीशों के निर्णय के अनुसार प्राणदंड भोगना पड़ा। इस प्रकार पार्लिमेंट की अद्भुत् विजय हुई। हां, कुछ समय पीछे वह सैनिक शक्ति से दब गयी। इसने ग्यारह वर्ष (१६४९ — ६०) बिना

बादशाह के शासन करने की परीक्षा की, परन्तु इसमें यह सफल न हुई; और, बादशाह के पद की पुनः स्थापना ('रिस्टोरेशन') करना पड़ी। परन्तु जब चार्ल्स द्वितीय तथा उसके बाद जेम्स द्वितीय ने प्रजा के अधिकारों का लिहाज न रखकर कैथलिक धर्म वालों का पक्षपात किया, तथा बादशाह के 'दैवी (ईश्वर-दत्त) अधिकार' के सिद्धान्त को व्यवहार में लाना चाहा तो प्रजा ने यथेष्ट विरोध किया। जेम्स के के समय इंगलैण्ड में महान क्रान्ति ('ग्रेट रिवोल्यूशन') हुई। पार्लिमेंट ने उसके दामाद विलियम को, जो आरेंज का ड्यूक था, बुला भेजा। उसके, एक भारी डच सेना सहित, आजाने पर सारा इंगलैण्ड उस की ओर होगया और जेम्स को वहाँ से भाग कर ही अपना पिंड छुड़ाना पड़ा। इङ्गलैण्ड के शासन का भार विलियम (तृतीय) और उसकी स्त्री मेरी को सौंप दिया गया। उसी अवसर पर (१६८९) पार्लिमेंट ने अधिकारों का मसविदा ('बिल-आफ-राइट्स') स्वीकार किया जिसकी मुख्य बातें इस प्रकार हैं:—

१—कोई कैथलिक मतावलम्बी व्यक्ति बादशाह न हो सकेगा।

२—बादशाह को राजनियम भंग करने का अधिकार नहीं है।

३—पार्लिमेंट ('कामन'-सभा) का निर्वाचन स्वतंत्र हुआ करेगा। *

४—पार्लिमेंट में सभासदों को भाषण करने की स्वतंत्रता होगी, और उनकी अनुमति बिना कोई कर न लगाया जायगा।

यह भी निश्चय किया गया कि बादशाह को भारी सेना रखने का अधिकार नहीं है।

---

* पहले कभी-कभी बादशाह ही इस बात का निर्णय कर देता था कि किस-किस स्थान से कितने-कितने प्रतिनिधि आवें। एवं, कभी-कभी ऐसा भी होता था कि 'कामन'-सभा ही अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए थोड़े-थोड़े आदमियों की बस्तियों को प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दे देती थी।

इस प्रकार, इस क्रांति से राजसत्ता प्रजा के हाथ में आगयी, पार्लिमेंट को राजकोष पर पूरा अधिकार होगया, और उसकी शक्ति यहाँ तक बढ़ गयी कि बादशाह के निजी ख़र्च * के लिए भी पार्लिमेंट की स्वीकृति अनिवार्य होगयी।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सोलहवीं शताब्दी तक 'कामन'-सभा पर बादशाह (तथा लार्ड-सभा) का प्रभुत्व रहा। सतरहवीं शताब्दी में उसका प्रभाव क्रमशः बढ़ने लगा। कुछ प्रयत्नों के बाद यह निश्चय होगया कि सार्वजनिक तथा धन सम्बन्धी क़ानूनी मसविदे पहले 'कामन'-सभा में उपस्थित किये जायँ, तत्पश्चात् 'लार्ड'-सभा में; और अन्त में बादशाह की औपचारिक ('फार्मल') स्वीकृति से काम में लाये जायँ। फिर धीरे-धीरे 'कामन'-सभा के अधिकार बढ़ते गये।

शारीरिक स्वाधीनता—बहुधा ऐसा होता था कि बादशाह अथवा अन्य अधिकारी अपने निरपराध विरोधियों को गिरफ़्तार करके अपरिमित काल के लिए क़ैद कर देते थे। इस प्रकार की गैर-कानूनी कार्रवाई को रोकने के लिए सन् १६७६ में पार्लिमेंट ने 'हेबियस कार्प्स एक्ट' पास किया। इससे उन लोगों की शारीरिक स्वधीनता की रक्षा की गयी, जो बिना किसी अपराध के अभियोग के गिरफ्तार किये जाते थे। यदि ऐसे व्यक्ति बिना वारंट के गिरफ़्तार किये जाते तो इस कानून के अनुसार उन्हें शीघ्र ही छुटकारा पाने का अधिकार होगया; जो व्यक्ति वारंट द्वारा गिरफ़्तार किये जाते, उन्हें अब जमानत पर छोड़े जाने या उनके विषय में शीघ्र ही न्यायालय में विचार किये जाने की व्यवस्था होगयी।

---

* राजघराने के व्यय के विवरण को 'सिविल लिस्ट' कहते हैं। इसके विषय में पहले लिखा जा चुका है।

सुधार-कानून—अठारहवीं शताब्दी के लगभग पूर्ण भाग तक, बादशाह और उसके मन्त्री होशियारी से लोगों को रिश्वतें देकर तथा उजड़े हुए नगरों की ओर से चुने जानेवाले प्रतिनिधियों पर अपना दबाव डालकर, पार्लिमेंट में, जैसे लोगों को चाहते थे, वैसों का बहुमत प्राप्त करने में, बहुत-कुछ सफल होते थे। क्रमशः लोगों में राजनैतिक विषयों की दिलचस्पी बढ़ने लगी। इसके परिणाम-स्वरूप सन् १८३२ ई० में पार्लिमेंट के चुनाव के सुधार का कानून ('रिफ़ार्म-बिल') पास हुआ। इससे पार्लिमेंट का संगठन बहुत बदलगया। जिन उजड़े हुए नगरों की ओर से केवल उनके स्वामी अमीर लोग ही प्रतिनिधि चुन देते थे, उनके प्रतिनिधि लेना बन्द या कम करदिया गया। जो नये-नये व्यापारी नगर बस गये थे, उन्हें प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया। इस प्रकार अमीरों की शक्ति कम होकर, व्यापारियों के अधिकार बढ़ गये।

जनता का अधिकार-पत्र—पूर्वोक्त सुधार-क़ानून पास होजाने पर भी बहुत-से आदमी असन्तुष्ट थे। व्यापारियों और दुकानदारोंको मताधिकार प्राप्त होगया था, परन्तु मजदूरों को नहीं मिला था। अतः लोगों में क्रमशः आन्दोलन होता रहा, और अन्ततः बहुत-से आदमी जनता के अधिकार-पत्र ('पीपल्स चार्टर') का समर्थन करने वाले होगये। इन्हें 'चार्टिस्ट' कहा जाता है। सन् १८४८ ई० में इन्होंने निम्नलिखित माँगे उपस्थित कीं :—

१—इक्कीस वर्ष या इससे अधिक आयु वाले सब अदमियों को मताधिकार हो।

२—निर्वाचन के लिए राज्य को, बराबर-बराबर के निर्वाचन-ज़िलों में विभक्त कर दिया जाय।

३—मत या 'वोट', पर्चे डालकर अर्थात् 'बेलट' द्वारा, लिये जायँ।

४—प्रत्येक आदमी निर्वाचित किया जा सके, चाहे उसके पास कुछ जायदाद हो या न हो।

५—पार्लिमेंट के सदस्यों को तनख्वाह मिला करे।

सरकार ने उस समय तो इस आन्दोलन का दमन कर दिया, परन्तु उसे १८६७ में दूसरा सुधार-क़ानून पास करके, नगरों में रहनेवालों को मताधिकार देना पड़ा। पीछे सन् १८८४ ई० में तीसरा सुधार-क़ानून पास करके ग्रामों में भी मत देनेवालों की संख्या बढ़ादी गयी। उपर्युक्त माँगों में से नं० ३ और ५ क़ानून बन चुकी हैं।

सन् १९११ का पार्लिमेंट एक्ट, 'कामन'-सभा की विजय— इंगलैंड की राजनैतिक दलबन्दी का वर्णन आगे किया जायगा। उन्नीसवीं शताब्दी में वहाँ प्रधानतया दो दल या पार्टियां थीं, उदार और अनुदार। 'लार्ड'-सभा के अधिकतर सदस्य प्रायः अनुदार होते हैं। इसलिए जब-कभी 'कामन'-सभा में उदार दलवालों का बहुमत हुआ और उन्होंने सार्वजनिक हित का कोई नियम प्रचलित करना चाहा तो वह प्रायः लार्ड-सभा द्वारा रद्द कर दिया जाता। इस निरन्तर की हार ने उदार दल को 'लार्ड'-सभा का विरोधी बना दिया। उन्हें बारबार यह अनुभव हुआ कि यह सभा हमारे मार्ग में कांटा स्वरूप है, इसे यदि सर्वथा दूर करना सम्भव न भी हो तो इसकी शक्ति तो भरसक कम कीजानी ही चाहिए। सन् १९१० ई० में, 'कामन'-सभा ने इस आशय का कानूनी मसविदा उपस्थित किया। 'लार्ड'-सभा उसे पास करना नहीं चाहती थी। परन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि इस कानून को पास करने के लिए, बादशाह ऐसे आदमियों को काफ़ी संख्या में 'लार्ड' बनाकर, 'लार्ड'-सभा में प्रविष्ठ

कर देगा, जो उस कानून का समर्थन करें, तो 'लार्ड'-सभा ने अपना विरोध हटा लिया, और वह मसविदा पास होगया। यह "पार्लिमेंट-एक्ट, सन् १६११ ई०" कहलाता है। इसकी मुख्य धाराएँ इस प्रकार हैं:—

१—किसी धन सम्बन्धी मसविदे को, यदि 'कामन'-सभा स्वीकार करले, तो चाहे 'लार्ड'-सभा उसे स्वीकार करे, या न करे, बादशाह की सम्मति से वह कार्य में परिणत होजायगा।

२—यदि किसी सार्वजनिक कानूनी मसविदे पर 'लार्ड'-सभा और 'कामन'-सभा में मतभेद हो तो वह मसविदा ज्यों-का-त्यों 'कामन'-सभा के अगले अधिवेशन में पेश होगा। 'कामन'-सभा के तीसरी बार उसे पास करलेने पर, तथा दो वर्ष का समय व्यतीत होजाने पर, फिर 'लार्ड'-सभा से पूछने की आवश्यकता न रहेगी, बादशाह की स्वीकृति से वह कानून बन जायगा। इस प्रकार 'लार्ड'-सभा के निषेध ('वीटो') अधिकार का अंत होकर, उस सभा को दो वर्ष तक कार्रवाई स्थगित करने का अधिकार रह गया।

३—'कामन'-सभा का नया चुनाव प्रति पाँचवें वर्ष होगा।

इस कानून से सरकारी कोष तथा धन सम्बन्धी क़ानूनी मसविदों पर 'कामन'-सभा का पूर्ण अधिकार होगया। सरकारी आयका बड़ा भाग सावजनिक करों से वसूल होता है, अतः इस विषय में जनता के प्रतिनिधियों का अधिकार होना ही चाहिए। उपर्युक्त क़ानून से इंगलैंड की शासन-नीति के सम्बन्ध में भी 'कामन'-सभा का, 'लार्ड'-सभा पर प्रभुत्व होगया। रहा बादशाह; उसकी स्वीकृति तो प्रत्येक विषय में अवश्य ली जाती है, परन्तु वह एक शिष्टाचार मात्र है। इस प्रकार इंगलैंड का शासन वास्तव में 'कामन'-सभा के हाथ में आगया।

स्त्रियों का मताधिकार—इंगलैंड में स्त्रियों के राजनैतिक अधिकारों का प्रश्न उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में उठा था। परन्तु

साठ वर्ष तक इसने सर्वसाधारण का ध्यान आकर्षित न किया। पश्चात् क्रमशः इनके मताधिकार सम्बन्धी संस्थाएँ स्थापित हुईं। आन्दोलन बढ़ता गया। फलतः पार्लिमेंट में कई बार इस विषय के प्रस्ताव और वादविवाद हुए; परन्तु विरोधियों का बल अधिक रहने के कारण उक्त प्रस्ताव स्वीकृत न हो पाये। तथापि मताभिलाषिणी स्त्रियों तथा उनके उद्देश्य से सहानुभूति रखनेवालों के निरन्तर आन्दोलन का यह परिणाम हुआ कि अनेक राजनीतिज्ञ तथा पार्लिमेंट के कई प्रभावशाली पदाधिकारी स्त्रियों को यह अधिकार देने के पक्ष में हो गये। अन्ततः सन् १९१८ ई० में तीस या अधिक वर्ष की उम्र वाली स्त्रियों को मताधिकार मिल गया। पश्चात् सन् १९२८ ई० में स्त्रियों को पुरुषों के समान ही, (अर्थात् २१ वर्ष या इससे अधिक उम्र की स्त्रियों को) मताधिकार प्राप्त हो गया।

सन् १९३५ में ग्रेट-ब्रिटेन में ३०६ लाख निर्वाचक थे :— १४४ लाख पुरुष और १६२ लाख स्त्रियाँ। इस प्रकार पार्लिमेंट की रचना में स्त्रियों का प्रभाव पुरुषों से अधिक है।

उपसंहार—उपर्युक्त विवेचन से यह ज्ञात होगया कि अंगरेज़ जाति ने किस प्रकार निरन्तर दृढ़ता-पूर्वक आन्दोलन करते रहकर, अपने राज्य को बहुत कुछ अनियन्त्रित राजतंत्र से, परिमित या वैध राजतंत्र में परिणत किया; यहाँ तक कि अब बादशाह प्रायः नाममात्र का बादशाह है, और शासनाधिकार मंत्रिमंडल को है, जो जनता के प्रतिनिधियों द्वारा बनी हुई 'कामन' (जनसाधारण)-सभा के प्रति उत्तरदायी होता है। यद्यपि प्रजातंत्र के आदर्श को प्राप्त करने में अभी कुछ और भी सुधारों की आवश्यकता है, इंगलैंड में प्रजातंत्र का युग आरम्भ होगया है। यह युग कब से आरम्भ हुआ, यह तो नहीं

बताया जा सकता; जैसा पहले कहा गया है, यहां शासनपद्धति का विकास क्रमशः, मंज़िल-दर-मंज़िल हुआ है, तथापि मोटे हिसाब से ऐसा कहने में कोई त्रुटि न होगी, कि यह युग उन्नीसवीं शताब्दी, तथा उसमें भी सन् १८३२ ई० से आरम्भ हुआ। इससे स्पष्ट है कि यह युग अभी सवा सौ वर्ष का भी नहीं हुआ। इससे पहले भी जनता ने बहुत-से स्वत्व प्राप्त किये थे, पर उनसे अधिकतर धनवानों की शक्ति बढ़ी थी। गत सौ वर्षों में साधारण जनता को शासन-कार्य में विशेष स्थान मिलने लगा है।

परन्तु अभी यह नहीं कहा जा सकता कि इगलैंड में वास्तव में प्रजातंत्रात्मक शासनपद्धति प्रचलित होगयी है, या 'कामन'-सभा साधारण जनता का प्रतिनिधित्व करती है। राजनैतिक दलों के सम्बन्ध में आगे लिखा जायगा। प्राय; इगलैंड में 'कंजर्वेटिव' या अनुदार दल का ज़ोर रहता है। 'कामन'-सभा में इस दल के सदस्यो की संख्या बहुत अधिक रहती है, और इनमेंसे कितनेही व्यक्ति बड़ी-बड़ी व्यापारिक, औद्योगिक या बामा कम्पनियों से सम्बधित होते हैं, या कोयले, लोहे या अस्त्र-शस्त्र आदि के कारखानों के हिस्सेदार या संचालक होते हैं। ये सदस्य जैसे-बने अपने वर्ग का स्वार्थ सिद्ध करने में लगे रहते हैं। मंत्रिमंडल में इनका काफी प्रभाव रहता है। यही नहीं, अनुदार दल के कितने ही सदस्य मंत्रिमंडल में आने से पूर्व स्वयं किसी कम्पनी या कारखाने अदि के डायरेक्टर रह चुकते हैं; ये लोग मंत्रिमंडल में सम्मिलित होते समय, डायरेक्टरी से अस्ताफा देदेते हैं, और पीछे मंत्रिमंडल से पृथक् होते ही पुनः अपना पुराना पद ग्रहण कर लेते हैं। इनका कुछ-न-कुछ सम्बन्ध कम्पनियों या कारखानों से बना रहता है, इसलिए ये राष्ट्रीय समस्याओं पर जो निर्णय करते हैं, वह निस्पक्ष

या सार्वजनिक-हित की दृष्टि से नहीं होता। यहाँ तक कि युद्ध का प्रारम्भ या संचालन भी, जनमत की उपेक्षा करके किया जासकता है। इस शोचनीय परिस्थितिमें आशा की किरण यही है कि इङ्गलैंडमें क्रमशः मजदूर-दल की वृद्धि होरही है, कुछ व्यक्ति कम्यूनिष्ट विचारों के भी होने लगे हैं। ये लोग व्यक्तिगत स्वार्थ-साधन में नहीं लगे रहते, और पूंजीवादी विचारों के विरोधी होते हैं। ज्यों-ज्यों इनकी संख्या और शक्ति बढ़ेगी, शासन-कार्य में जनता की भावना अधिक व्यक्त होगी।

नवाँ परिच्छेद

राजनैतिक दलबन्दी

स्वतंत्र देशों में पुरानी पार्टियों को गिरा कर जो नयी पार्टियाँ उठती हैं, उन पर उत्सुकता-पूर्ण नेत्रों से टकटकी बांधी जाती है। उनमें जोश होता है, उत्साह होता है, और कार्य करने की धुन होती है।

—सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार।

प्राक्कथन—राजनैतिक दल या 'पार्टी' ऐसे मनुष्यों के समूह को कहते हैं, जिनके तत्कालीन मुख्य राजनैतिक प्रश्नों पर एक ही प्रकार के विचार हों, और जो राजकाज में इन विचारों का प्रचार करने के लिए संगठित हुए हों। इङ्गलैण्ड में सरकार का कभी एक राजनैतिक दल के हाथ में होना, फिर उसके हाथ से निकल कर दूसरे दल के हाथ में चला जाना, वहाँ के शासन की एक महत्व-पूर्ण विशेषता है। इस परिच्छेद में हम यह बतलायेंगे कि इंगलैंड के शासन-कार्य में दलबन्दी की प्रथा कैसे आरम्भ तथा विकसित हुई।

पहले बहुत समय तक इंगलैंड में भिन्न-भिन्न राजनैतिक दल नहीं

थे। वास्तव में सोलहवीं शताब्दी तक दलबन्दी के लिए अनुकूल स्थिति ही नहीं थी। जनता में उस समय तक राजनैतिक जागृति नहीं हुई थी; वह बहुत कुछ अपने बादशाहों के अधीन थी। पार्लिमेंट के अधिवेशन बहुत कम होते थे। उसके सदस्यों को ऐसा अवसर नहीं मिलता था कि वे एक-दूसरे को अच्छी तरह जानलें और किसी विषय पर अपना मत संगठित कर सकें। बादशाह ख़ास-ख़ास व्यक्तियों को ही मंत्री चुनता था, दूसरों को सरकारी कार्य का ज्ञान या अनुभव बहुत कम होता था। इस लिए मंत्रियों का भी वास्तविक विरोध उस समय तक नहीं होता था, जब तक कि पार्लिमेंट उनके विरुद्ध अपने अधिकार का उपयोग करने के लिए पूरी तौर से कटिबद्ध न हो जाय।

दलबन्दी का सूत्रपात—इंगलैंड में राजनैतिक दलों की पहली झांकी स्टुअर्ट वंशी बादशाहों के समय में होती है। ये बादशाह अपने अधिकारों को ईश्वर-दत्त समझते थे। इसके विपरीत, पर्लिमेंट के बहुत-से सदस्यों का मत था कि उन्हें बादशाह पर नियंत्रण करने का अधिकार है। इस मतभेद के कारण इंगलैण्ड में बड़ा गृह-युद्ध ('सिविल वार') हुआ। उसमें पार्लिमेंट की सेना की विजय हुई। बादशाह चार्ल्स प्रथम के बध किये जाने का उल्लेख पहले किया जा चुका है। इस समय से पार्लिमेंट में दो दल हो गये; एक, राजा का समर्थक; दूसरा, प्रजापक्षीय।

कुछ वर्ष प्रजापक्षीय लोगों का बोलबाला रहा। उनका नेता आलिवर क्रामवेल देश-रक्षक की उपाधि से, प्रधान अधिकारी रहा। राजगद्दी ख़ाली पड़ी रही। परन्तु क्रामवेल की मृत्यु के बाद, यह बात दूर होगयी। उसका पुत्र अयोग्य था। राजकीय पक्ष के लोगों का बहुमत होगया। चार्ल्स प्रथम का पुत्र चार्ल्स द्वितीय राजगद्दी पर बैठा

दिया गया।

'टोरी' और 'विग'—इस बादशाह का भाई (जेम्स द्वितीय) पक्का रोमन केथलिक था। उसे गद्दी पर बैठने का अधिकार न रहे, इस आशय का कानूनी मसविदा पार्लिमेंट में उपस्थित किया जाने पर, पुनः दोनों दलों का परस्पर में विरोध हुआ। जेम्स द्वितीय के तरफदार 'टोरी' और उसके विरोधी 'विग' कहलाने लगे। संक्षेप में शासनपद्धति के लिए 'टोरी' संरक्षणात्मक भाव रखते थे और 'विग', सुधारक।

सरकार की बागडोर कभी एक दल के हाथ में चली जाती, कभी दूसरे के हाथ में। पहले कहा जा चुका है कि अठारहवीं शताब्दी में दो बादशाह—जार्ज प्रथम, और जार्ज द्वितीय—अंगरेज़ी भाषा न समझ सकने के कारण मंत्रिमण्डल के वादविवाद में भाग नहीं ले सकते थे, इससे शासन अधिकार बहुत कुछ प्रधान मंत्री के हाथ में चला गया। यह मंत्री उस दल का नेता होता था, जिसके सदस्यों की पार्लिमेंट में, अधिक संख्या हो। सर राबर्ट वालपोल पहला प्रधान मंत्री था।

जार्ज तृतीय के शासन-काल में इंगलैण्ड के उन उपनिवेशों ने स्वतंत्र होने का प्रयत्न किया, जिन्हें अब अमरीका के संयुक्त राज्य कहते हैं। 'विग' दल के सदस्यों की उनसे सहानुभूति थी, वे उनकी इस मांग को स्वीकार करने के पक्ष में थे कि बिना उनकी रज़ामन्दी के उन पर कर न लगाया जाय। परन्तु टोरी दल के अधिकारारूढ़ होने के कारण उक्त उपनिवेशों से युद्ध किया गया, जिसमें अन्ततः उनकी विजय होने से 'टोरी' दल का प्रभाव घट गया और सरकार की बागडोर 'विग' दल के हाथ में चली गयी।

सन् १७८९ ई० में फ्रांस की राजक्रान्ति हुई। कुछ वर्ष बाद

विप्लववादियों के अत्याचार हुए तो इंगलैंड में 'विग' दल वालों का प्रभाव कम रहा गया; और 'टोरी' दल ने ज़ोर पकड़ लिया; और, नैपोलियन के साथ युद्ध रहने तक 'टोरी' दल का ही प्रभुत्व रहा। युद्ध समाप्त हो जाने पर लोगों के विचारों में क्रमशः परिवर्तन हुआ, तो पुनः 'विग' दल पदारूढ़ होगया; और उसके प्रयत्न से १८३२ ई० में पार्लिमेंट के निर्वाचन सम्बन्धी सुधार के लिए 'रिफ़ार्म बिल' पास होगया, जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है।

उदार और अनुदार दल—उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में 'विग' और 'टोरी' दलों के नाम क्रमशः 'लिबरल' और 'कंजर्वेटिव' होगये। 'लिबरल' का अर्थ उदार है; और कंजर्वेटिव का अर्थ है पुरातनवादी या दकियानूसी। उदार दल का विरोधी होने के कारण यह दल साधारण बोलचाल में अनुदार कहा जाता है।* प्रायः 'लिबरल' दल में ऐसे व्यक्ति गिने जाते हैं, जो वर्तमान परिस्थिति से असंतुष्ट तथा उसे सुधारने के इच्छुक हों। कंजर्वेटिव वह कहलाते हैं जो वर्तमान स्थितिको बनाये रखना, और प्राचीनता की रक्षा करना चाहते हों, उसमें कोई परिवर्तन केवल विशेष दशा में ही करने के लिए सहमत हों। ये लोग प्रायः धनवानों और धर्माचारियों की सत्ता के समर्थक होते हैं।

---

* उदार और अनुदार शब्द, वास्तव में इन दलों पर पूर्णतया चरितार्थ नहीं होते। इङ्गलैण्ड के इतिहास में कभी-कभी उदार दल ने अनुदारता का, और अनुदार दल ने उदारता का भी व्यवहार किया है। विदेशनीति और विशेषतया भारतवर्ष के सम्बन्ध में दोनों दलों के विचारों में खास अन्तर नहीं है। किसी ने व्यंग में कहा है—'जैसे लिबरल वैसे टोरी, जैसा नाला वैसी मोरी'। भारतवासियों को मजदूर दल से बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं; परन्तु प्रायः उसके नेताओं से भी सहानुभूति पूर्ण शब्दों के अतिरिक्त कुछ विशेष प्राप्ति न हुई।

मजदूर दल—उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में एक नये दल का जन्म हुआ, यह मजदूर दल या 'लेबर पार्टी' कहलाता है। इसके सदस्य प्रायः मज़दूर-संघों, सहकारी समितियों आदि के प्रतिनिधि होते हैं। इनका एक प्रधान सिद्धान्त यह होता है कि मजदूरों आदि के सार्वजनिक हित को लक्ष्य में रखकर सरकार को चाहिए कि वह उद्योग-धन्धों आदि का पूर्ण नियंत्रण करे।* इनके 'चार्टिस्ट' आन्दोलन का उल्लेख पहले किया जा चुका है। सन् १८८५ ई० में प्रथम वार मजदूर दल के सदस्य पार्लिमेंट के निर्वाचन में चुने गये।

आधुनिक स्थिति—अब इंगलैण्ड में तीन दल प्रधान हैं:—(१)उदार, (२) अनुदार, और (३)मजदूर। सन् ११२४ ई०में मजदूर दल ने अपना मंत्रिमंडल बनाया, परन्तु 'कामन'-सभा में इस दल के सदस्यों की संख्या यथेष्ट नहीं थी, अतः ये उदार दलवालों के सहयोग से कार्य करते रहे। अन्ततः केवल नौ महिने में ही यह दल परास्त होगया, और शासन-सूत्र 'अनुदार' दल के हाथ में चला गया।

जिस अकेले या संयुक्त दल के सदस्योंका मंत्रिमंडल बनता है,वह सरकारी दल कहलाता है। और, जिस एक या अधिक दलों के सदस्य सरकारी नीति का विरोध या आलोचना करते रहते हैं, उन्हें विरोधी दल कहा जाता है।

उदार, अनुदार तथा मजदूर दलों के अतिरिक्त और भी कई दल हो सकते हैं। कोई-कोई दल ऐसा होता है जिसमें दो तीन-दलों के विचारों का समावेश हो। दलों की कोई निर्धारित संख्या नहीं है।

*इसके विपरीत, व्यक्तिवादी ('इंडिविजुअलिस्टिक') यह चाहते हैं कि व्यक्तियों को आर्थिक या सामाजिक आदि विषयों में, जहाँ तक राष्ट्र-हित में वाधा न हो, अधिक-से-अधिक स्वतन्त्रता दी जाय।

समय-समय पर नये दलों का निर्माण होता रहता है, तथा कुछ पुराने दल विलुप्त भी होते रहते हैं।* स्मरण रहे कि कोई सदस्य अपने दल से सम्बन्ध त्याग कर दूसरे दल में मिल सकता है।

दलबन्दी से हानि-लाभ—पराधीन देशों में समस्त विवेकशील सज्जनों का एकमात्र कर्तव्य यह होता है कि देश को पराधीनता-पाश से मुक्त करें। बहुधा लक्ष्य-प्राप्ति के उपायों के विषय में भिन्न-भिन्न कार्यकर्ताओं के विचारों में कुछ भिन्नता होती है, परन्तु यदि यह भिन्नता दूर करके कुछ पारस्परिक समझौते से काम न लिया जाय तो उनका अभीष्ट सिद्ध होना—देश स्वतंत्र होना—ही कठिन है। इसलिए पराधीनता की दशा में दलबन्दियों का होना बहुत घातक होता है।

परन्तु जब देश स्वाधीन हो, तो यदि उसकी उन्नति के लिए भिन्न-भिन्न विचार वाले कार्यकर्ता अपना पृथक्-पृथक् संगठन करलें और राजशक्ति प्राप्त करने में एक-दूसरे से प्रतियोगिता करें तो राजनैतिक दृष्टि से कोई हानि नहीं है, वरन् इससे लाभ ही है, क्योंकि प्रत्येक दल अपने-आपको जनता में अन्य दलों की अपेक्षा अधिक प्रिय बनाने के लिए, देशोन्नति के कार्यों में अधिक अग्रसर तथा प्रयत्न-शीलहोगा। हाँ, नागरिकों की वैयक्तिक अथवा विशुद्ध नैतिक दृष्टि से, स्वाधीन देशों में भी दलबन्दी नीति का समर्थन नहीं किया जा सकता। सदस्य अपने दल (पार्टी) की उन्नति या वृद्धि के लिए दूसरों को तरह-तरह का प्रलोभन देते हैं, और अपनी विजय के लिए

---

*सन् १९३५ के साधारण चुनाव के बाद 'कामन'-सभा में विविध दलों की स्थिति इस प्रकार थी:—सरकारी ४३१ (अनुदार ३८७, उदार-राष्ट्रीय ३३ राष्ट्रीय-मजदूर ८, राष्ट्रीय ३); विरोधी १८४ (मजदूर १५४, उदार १७, स्वतंत्र-उदार ४, स्वतंत्रमजदूर ४, स्वतंत्र ४, कम्यूनिस्ट १)।

बड़े दाव-पेंच का जीवन व्यतीत करते हैं। उन्हें विषय-ज्ञान न होते हुए, अथवा विपरीत सम्मति रखते हुए भी, उस ओर मत देना पड़ता है, जिस ओर उनके दल के अन्य सदस्य देते हों। सच्चे स्वराज्य में, इस प्रकार आत्मा और सत्य का घात करनेवाली, ऐसी बातों को सर्वथा त्याग देना चाहिए।

दसवाँ परिच्छेद

न्यायालय

लोगों के लिए कुछ स्वतंत्रता नहीं होती, यदि न्याय-शक्ति व्यवस्थापक तथा शासन-शक्ति से पृथक् न रखी जाय। —मोंटेस्क

प्रत्येक राज्य के कार्यों के तीन भाग किये जा सकते हैं:—(१) व्यवस्था, (२) शासन और, (३) न्याय। इनमें से प्रथम दो का वर्णन हो चुका। इस परिच्छेद में न्यायालयों के विषय में आवश्यक बातें बतलायी जायँगी।

न्याय-कार्य की विशेषताएँ—ब्रिटिश संयुक्त राज्य के न्याय-कार्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:—

१—ब्रिटिश संयुक्त राज्य में प्रत्येक आदमी को कानून का समान रूप से पालन करना होता है। वहाँ सभी अपराधों के लिए साधारण न्यायालय हैं, किसी अपराध के लिए विशेष नहीं। बादशाह के बारे में तो हम पहले ही बता चुके हैं कि उसके कामों के उत्तरदाता मन्त्री होते हैं। मन्त्रियों तथा शासकों के भी विरुद्ध सब मामले उन्हीं अदालतों में सुने जाते हैं, जिनमें दूसरे नागरिकों के विरुद्ध सुने जाते

हैं, और, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी वैयक्तिक स्वतंत्रता में अनुचित और ग़ैर-कानूनी हस्तक्षेप करनेवालों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करने का अधिकार है। इसका विशेष रूप से, पहले उल्लेख हो चुका है।

२—न्यायाधीशों को बादशाह, प्रधान मन्त्री या लार्ड-चांसलर (लार्ड-सभा के अध्यक्ष) की सिफ़ारिश से नियत करता है। वे अपने पद से उस समय तक पृथक् नहीं किये जा सकते, जब कि वे नेक-चलनी से अपना कार्य करते रहें, और पार्लिमेंट की दोनों सभाएँ बादशाह को उन्हें उनके पद से पृथक् करने की सिफ़ारिश न करें। यही कारण है कि इंगलैंड में न्याय-कार्य स्वतंत्रता पूर्वक होता रहता है और उस पर शासकों का किसी प्रकार अनुचित प्रभाव नहीं पड़ने पाता।

३— सब फ़ौजदारी मामलों और अधिकांश दीवानी मामलों का फ़ैसला 'जूरी' के निर्णय के अनुसार किया जाता है।* इससे मुकदमे पर अच्छी तरह विचार होजाता है और अन्याय होने की सम्भावना बहुत ही कम रह जाती है।

४—स्त्रियां न्यायाधीश अथवा जूरी की सदस्य होसकती हैं।

फ़ौजदारी सम्बन्धी न्याय की विशेषताएँ—

१—इंगलैंड में किसी व्यक्ति पर फ़ौजदारी का मुकदमा तब तक नहीं चल सकता, जबतक उसके अपराध की जाँच कोई अफ़सर अच्छी तरह न करले, और उसे उसके अभियुक्त होने की सम्भावना प्रतीत न हो।

२—अभियुक्त को दोषी प्रमाणित करने का सब भार अभियोग

* प्रत्येक मुकदमे के आरम्भ होने के समय, न्यायाधीश ऐसे पांच या सात स्थानीय व्यक्तियों को चुन लेता है जो उसके साथ मुकदमे का हाल सुनते हैं और अन्त में मुकदमे की घटनाओं के सम्बन्ध में अपनी राय देते हैं। न्यायाधीश इनकी राय के आधार पर, कानून के अनुसार मुकदमे का फ़ैसला करता है।

चलानेवाले पर रहता है।

३—अभियुक्त का विचार 'जूरी' द्वारा होता है। यदि अभियुक्त को जूरी के किसी सदस्य के निष्पक्ष होने के सम्बन्ध में संदेह हो तो वह, कार्रवाई आरम्भ होने से पहले आपत्ति कर सकता है।

४—अभियुक्त का विचार खुली अदालत में होता है, और उसके विरुद्ध जो गवाहियाँ ली जाती हैं, वे शपथ देकर ली जाती हैं।

५—जूरी का निर्णय अन्तिम निर्णय होता है। प्रत्येक अपराध के दंड की सीमा क़ानून द्वारा निर्धारित की हुई है।

उपर्युक्त विशेषताओं के कारण, इंगलैंड में, फ़ौजदारी मामलों में, अन्य देशों और विशेषतया भारतवर्ष की अपेक्षा अधिक न्याय होता है।

न्याय की प्रधान अदालत—इंगलैंड की सब से बड़ी अदालत को सुप्रीम कोर्ट कहते हैं। इस अदालत के दो भाग हैं:—(१) हाईकोर्ट और (२) अपील-कोर्ट। हाईकोर्ट में दीवानी, फ़ौजदारी तथा अन्य प्रकार के सब मुकदमों पर विचार होता है। इसमें लगभग बीस न्यायाधीश रहते हैं। हाईकोर्ट नीचे की अदालतों के काम का निरीक्षण करता है तथा उनके किये हुए फ़ैसलों की अपील सुनता है। अपील-कोर्ट में नौ न्यायाधीश होते हैं। यह हाईकोर्ट के, तथा कुछ विशेष दशाओं में नीचे की अदालतों के फ़ैसलों की अपील सुनता है।

'लार्ड'-सभा के न्याय सम्बन्धी अधिकार—पहले बताया जाचुका है कि किसी लार्ड की राजद्रोह या अन्य घोर अपराध सम्बन्धी जाँच 'लार्ड'-सभा में ही होती है। 'लार्डों' की जागीर से

सम्बन्ध रखने वाले मुकदमों का निर्णय भी लार्ड-सभा ही करती है। यदि 'कामन'-सभा किसी पर दोषारोपण करती है, या उससे जवाब-तलब करती है तो यह काय लार्ड-सभा में ही होता है। अपील-कोर्ट के फैसलों की अपील लार्ड-सभा में ही होती है। इस प्रकार लार्ड-सभा ब्रिटिश संयुक्त राज्य की सब से बड़ी अपील-कोर्ट है। सिद्धान्त से तो पूरी 'लार्ड'-सभा ही न्यायालय का कार्य कर सकती है, परन्तु व्यवहार न्याय-कार्य लार्ड-चांसलर और ला (कानून)-लार्डों द्वारा होता है जो कानून के अच्छे जानकार होते हैं, और न्याय-कार्य के लिए आजन्म लार्ड बनाये जाते हैं। इन्हें कभी-कभी अन्य कानून-ज्ञाताओं से सहायता मिलती है।

ब्रिटिश उपनिवेशों, तथा भारतवर्ष की उंची अदालतों के फ़ैसलों की अपील, 'प्रिवी कौंसिल' की न्याय-समिति में होती है, इसका वर्णन पहले किया जाचुका है।

ब्रिटिश संयुक्त राज्य में, किसी कानून का अर्थ लगाने में मत-भेद उपस्थित होजाने पर उसका निर्णय न्यायालय करता है, और वह निर्णय मान्य होता है। परन्तु इसके अतिरिक्त न्यायालय को, यह अधिकार नहीं है कि वह किसी क़ानून के विषय में यह निश्चय करे कि वह उचित है, या अनुचित।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

उत्तरी आयर्लैंड

उत्तरी आयर्लैंड से अभिप्राय: यहाँ आयर्लैंड के अल्स्टर प्रान्त के उन छः जिलों के प्रदेश से है, जिन का शासन शेष (दक्षिण)

आयर्लैंड (लींस्टर, मंस्टर, कनाट नामक प्रान्तों तथा अल्स्टर प्रान्त के तीन जिलों से पृथक् किया जाता है। क्योंकि इस प्रदेश में अल्स्टर-का ही आधिक्य है; इसे साधारण बोलचाल में अल्स्टर ही कह दिया जाता है। इसका क्षेत्रफल सवा तीन लाख एकड़, जनसंख्या तेरह लाख, तथा राजधानी बेलफास्ट है; जब कि (दक्षिण) आयर्लैंड का क्षेत्रफल सतरह लाख एकड़, जनसंख्या तीस लाख है, और राजधानी डबलिन है।

पहले बताया जा चुका है कि सन् १९२० ई० में उत्तरी आयर्लैंड को अपने आन्तरिक शासन-प्रबन्ध के कुछ अधिकार दिये गये, और इसके लिए एक पृथक् पार्लिमेंट का संगठन किया गया, जो ब्रिटिश पार्लिमेंट के निरीक्षण और नियंत्रण में कुछ निर्धारित विषयों के क़ानून बनाने लगी। इंगलैंड, वेल्ज, और स्काटलैंड में कोई ऐसा भू-भाग नहीं है, जिसे आयर्लैंड की तरह पृथक् शासन-प्रबन्ध और कानून बनाने का अधिकार हो। पहले की भांति अब भी यहाँ के तेरह प्रतिनिधि ग्रेट-ब्रिटेन की 'कामन'-सभा में भाग लेते हैं।

गवर्नर और प्रबन्धकारिणी सभा—उत्तरी आयर्लैंड का प्रधान शासक गवर्नर कहलाता है, वह बादशाह का प्रतिनिधि होता है और उसके द्वारा ही छः वर्ष के लिए नियुक्त होता है।* वह प्रबन्धकारिणी सभा के परामर्श से उन शासन सम्बन्धी कार्यों को करता है, जो उत्तरी आयर्लैंड को सौंपे गये हैं। सन् १९४१ से प्रबन्धकारिणी सभा में आठ मंत्री हैं, जो अपने शासन-

* ड्यूक-आफ-एबरकार्न सन् १९२२ में छः वर्ष के लिए गवर्नर नियुक्त हुए थे। उसके बाद तीन बार छः-छः वर्ष के लिए उनकी पुनः नियुक्ति हुई है। वार्षिक वेतन आठ हजार पौंड है, जिसमें से छः हजार पौंड ग्रेट-ब्रिटेन की आय से दिया जाता है।

कार्य के लिए यहाँ की 'कामन'-सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इन मंत्रियों में से प्रधान मंत्री को ३२०० पौंड और अन्य मंत्रियों में से प्रत्येक को २,००० पौंड वार्षिक वेतन दिया जाता है।

पार्लिमेंट—उत्तरी आयर्लैंड की पार्लिमेंट में दो सभाएँ हैं:— (१) सिनेट और, (२) 'कामन'-सभा। सिनेट में २६ सदस्य होते हैं; उनमें से दो 'एक्स-आफ़िशो' अर्थात् अपने पद के कारण सदस्य होते हैं। शेष चौबीस सदस्य निर्वाचित होते हैं; ये उत्तरी आयर्लैंड की 'कामन'-सभा द्वारा आठ वर्ष के लिए चुने जाते हैं; इनमें से बारह सदस्यों का निर्वाचन प्रति चौथे वर्ष होता है। [ब्रिटिश साम्राज्य में यही एकमात्र सिनेट है, जिसके सदस्य 'कामन'-सभा द्वारा चुने जाते हैं।]

'कामन'सभा का कार्यकाल साधारणतया पांच वर्ष होता है। इसमें ५२ सदस्य होते हैं। उत्तरी आयर्लैंड की जनता को निर्वाचन-अधिकार वैसा ही है, जैसा इंगलैंड की जनता को है।*

यहाँ लार्ड दोनों सभाओं के सदस्य हो सकते हैं, तथा उन्हें मताधिकार है। सन् १६२८ के कानून से स्त्रियों को मताधिकार पुरुषों के समान दिया गया, और सन् १९२६ में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रथा हटा कर 'प्रत्येक निर्वाचक-संघ के लिए एक-एक सदस्य' की प्रणाली का अवलम्बन किया गया।

धन सम्बन्धी कानूनी मसविदों का विचार 'कामन'-सभा में ही आरम्भ हो सकता है, सिनेट को उक्त मसविदों में कोई परिवर्तन करने का अधिकार नहीं होता। यदि कोई कानूनी मसविदा 'कामन'-सभा में स्वीकृत होकर, सिनेट द्वारा अस्वीकृत होजाय तो 'कामन'-सभा के

---

* दोनों सभाओं के ऐसे सदस्यों को जिन्हें अन्य सरकारी वेतन नहीं मिलता, निर्धारित भत्ता दिया जाता है।

दूसरे अधिवेशन में पुनः स्वीकृत होने पर वह 'पार्लिमेंट' की दोनों सभाओं के संयुक्त अधिवेशन में उपस्थित किया जाता है, और बहुमत के निर्णय के अनुसार, गवर्नर के स्वीकार कर लेने पर, कानून का रूप धारण कर लेता है।

कानून बनाने का अधिकार—उत्तरी आयलैंड की पार्लिमेंट को अपने क्षेत्र के लिए, कुछ विषयों को छोड़कर, अन्य सब विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार है। जिन विषयों के लिए वह कानून नहीं बना सकती, वे निम्नलिखित हैं:—बादशाह, युद्ध, शान्ति तथा सन्धियां, नौ सेना, स्थल सेना, वायु सेना; सम्मान सूचक पद, राजद्रोह, विदेशी व्यापार, जहाज़ चलाना, समुद्र के तार, बे तार के तार, वायुयान यात्रा, मुद्रा-ढलाई और हुन्डी आदि, तोल और माप, व्यापार-चिन्ह (ट्रेड-मार्क) आयात-निर्यात कर, मादक द्रव्य कर, मुनाफे पर कर, आय कर, डाक विभाग, सेविंग बैंक, सरकारी दस्तावेज़ों की रजिस्टरी आदि। यह पार्लिमेंट कोई ऐसा भी कानून नहीं बना सकती, जिससे धार्मिक विषय में हस्तक्षेप होता हो, या जिसके द्वारा किसी विशेष धर्म के अनुयाइयों से पक्षपात या सख्ती होती हो, या जिसके द्वारा किसी व्यक्ति या संस्था की जायदाद बिना मुआवज़े के ली जाय।

न्याय-कार्य—उत्तरी आयलैंड की सब से बड़ी अदालत 'सुप्रीम कोर्ट' है; उसके दो भाग हैं:— हाईकोर्ट और अपील-कोर्ट। अपील-कोर्ट के फ़ैसले की अन्तिम अपील इंगलैंड की लार्ड-सभा में होती है। यदि किसी क़ानूनी मसविदे के सम्बन्ध में यह प्रश्न उठे कि उत्तरी आयलैंड की पार्लिमेंट को उसके बनाने का अधिकार है या नहीं, तो उसका अन्तिम निर्णय इंगलैंड की 'प्रिवी कौंसिल' की न्याय-

समिति करती है।

उत्तरी आयर्लैण्ड ब्रिटिश संयुक्त राज्य का अंग है, वह ब्रिटिश पार्लिमेंट में अपने प्रतिनिधि भेजता है और उस पार्लिमेंट द्वारा बनाये हुए कानूनों के अनुसार शासित होता है। उसकी रक्षा का प्रबन्ध ब्रिटिश सेना करती है। उसे आन्तरिक विषयों के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार हैं। उसकी राजनैतिक स्थिति स्काटलैंड और (दक्षिण) आयर्लैंड के बीच की है। उत्तरी आयर्लैंड में अपनी पार्लिमेंट है, जब कि स्काटलैण्ड की अपनी पार्लिमेंट नहीं है। दूसरी ओर उत्तरी आयर्लैंड को केवल आन्तरिक विषयों के सम्बन्ध में, और परिमित ही अधिकार हैं। इसके विपरीत, (दक्षिण) आयर्लैण्ड की शासन सम्बन्धी बातों में इंगलैंड कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता; इसके सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक आगे लिखा जायगा।

इस परिच्छेद में इंगलैण्ड के निकटवर्ती द्वीपों के शासन के सम्बन्ध में भी आवश्यक बातें दे दीजाती हैं।

खाड़ी के द्वीप—ये द्वीप 'इंगलिश चेनल' खाड़ी में फ्रांस के पश्चिमोत्तर तट पर हैं। पहले ये नार्मंडी (फ्रांस) के ड्यूक के अधिकार में थे, जो ग्यारहवीं सदी में इंगलैंड का बादशाह हुआ, तब से ये बराबर इंगलैण्ड के ही अधीन रहे हैं, यद्यपि नार्मंडी आदि पर इंगलैंड के बादशाह का अधिकार बहुत समय से हट गया है। इन द्वीपों की व्यवस्थापक सभाओं तथा न्यायालयों में प्रायः पुरानी फ्रांसीसी भाषा का प्रयोग होता है, और इनके कानून का आधार अधिकतर नारमंडी का पुराना कानून है। इनके शासन-प्रबन्ध में यहाँ के रिवाजों का बहुत ध्यान रखा जाता है। यहाँ की व्यवस्थापक सभाएँ स्थानीय उपयोगिता के परिमित कानून बना सकती हैं। ब्रिटिश पार्लिमेंट के कानून इन द्वीपों के निवासियों पर लागू नहीं होते, जब तक कि उन

कानूनों में इन द्वीपों का स्पष्ट उल्लेख न हो।

मानद्वीप—यह द्वीप इंगलैण्ड के पश्चिमोत्तर में, आयरिश समुद्र में, इंगलैंड और आयलैंड के बीच में है। इसका शासन-प्रबन्ध एक लेफ्टिनेंट-गवर्नर करता है, जो बादशाह द्वारा नियुक्त होता है, और अपने कार्य के लिए इंगलैंड के स्वदेश-विभाग के प्रति उत्तरदायी होता है। यहाँ स्थानीय कानून बनाने के लिए दो सभाएँ हैं। शासन यहाँ के रिवाज के अनुसार होता है। ब्रिटिश पार्लिमेंट जब इस द्वीप के लिए कोई कानून बनाती है तो उसमें इस का स्पष्ट उल्लेख किया जाता है।

बारहवाँ परिच्छेद

स्थानीय शासन

स्वाधीन राष्ट्रों की शक्ति नागरिकों की स्थानीय समितियों पर निर्भर होती है। —डी० टोकबिल

प्रत्येक देश में कुछ ऐसे कार्य होते हैं, जिन्हें केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार सुभीते से नहीं कर सकती, उन कार्यों को स्थानीय संस्थाओं द्वारा कराना अच्छा होता है। ये संस्थाएँ उन्हें स्थानीय परिस्थिति तथा आवश्यकताओं के अनुसार अच्छी तरह सम्पादन कर सकती हैं। इन संस्थाओं में बोर्ड या कमेटी महत्त्वपूर्ण विषयों का निर्णय करती, और साधारण नीति निर्धारित करती हैं। ब्यौरेवार बातों का प्रबन्ध करने के लिए भिन्न-भिन्न उपसमितियों को विविध विषय सौंपे जाते हैं। ये उपसमितियां बोर्ड या कमेटी के निरीक्षण में अपना कर्तव्य पालन करती हैं। बोर्ड, कमेटी तथा उपसमितियों के निर्णयों को अमल में

लाने के लिए प्रत्येक स्थान में कुछ स्थायी कर्मचारी रहते हैं।

स्थानीय संस्थाएँ—ब्रिटिश संयुक्त राज्य की स्थानीय संस्थाओं की वृद्धि, यहाँ की अन्य संस्थाओं की भांति समय और स्थान के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से हुई है। ये संस्थाएँ पुरानी हैं, और किसी खास विधान की कृति नहीं हैं। इनकी आधुनिक व्यवस्था गत सौ वर्षसे आरम्भ हुई हैं। सन् १८३५ के म्युनिसिपल कारपोरेशन एक्ट और १८८८ औ १८९४ के लोकल-गवर्मेंट-एक्ट से भिन्न-भिन्न भागों के स्थानीय प्रबन्ध में कुछ समानता स्थापित की गयी है। उससे पूर्व भिन्न-भिन्न स्थानों की संस्थाओं के अधिकार, कार्यक्षेप, कर पद्धति आदि में बहुत ही विभिन्नता एवं कुव्यवस्था थी। अब इंगलैंड, वेल्ज़, स्कटलैंड और उत्तरी आयर्लैंड में से प्रत्येक कुछ काउंटियों तथा काउन्टी-बरों में विभक्त है। जिस बड़े शहर की जनसख्या ७५ हजार या इससे अधिक होती है, उसे काउन्टी-बरो कहते हैं। प्रत्येक काउन्टी के स्थानीय कार्य के लिए एक काउन्टी-कौंसिल होती है। हरएक काउन्टी ग्राम-ज़िलों, नगर-ज़िलो तथा म्युनिसिपल बरों में विभक्त होती है। प्रत्येक नगर-ज़िले तथा ग्राम-ज़िले में ज़िला-कौंसिल है, और, म्युनिसिपल बरो में म्युनिसिपल कौंसिल। नगर-जिले और ग्राम-ज़िले 'पेरिशों' में विभक्त हैं। पेरिश एक बड़ा ग्राम या कुछ ग्रामों का समूह होता है। पेरिशों में पेरिश-कौंसिल होती है। स्थानीय संस्थाओं के सब सदस्य अवैतनिक होते हैं।

काउन्टी कौंसिल—काउन्टी-कौंसिल में सभापति, 'एल्डर-मेन और साधारण सदस्य (कौंसिलर) होते हैं। काउन्टी में प्रत्येक ज़िले से एक या अधिक साधारण सदस्य प्रति तीसरे वर्ष चुने जाते हैं। एलडरमेन साधारण सदस्यों द्वारा छः वर्ष के लिए चुने जाते हैं,

परन्तु आधे ऐलडरमेनों का चुनाव तीसरे वर्ष होजाता है। कुल ऐलडरमेनों की संख्या साधारण सदस्यों की एक-तिहाई होती है, साधारण सदस्यों की संख्या काउन्टी के विस्तार पर निर्भर है। सभापति कौंसिल द्वारा चुना जाता है निर्वाचन अधिकार उन सब बालिग़ पुरुषों तथा स्त्रियों को है, जो निर्वाचन के समय छः मास तक काउन्टी में रह चुके हों।

काउन्टी-कौंसिल के कार्य अनेक हैं, उनका ब्यौरेवार वर्णन करना बहुत कठिन है। उनके कार्यों के मुख्य भेद निम्नलिखित है:— (१) शिक्षा, (२) सार्वजनिक स्वास्थ्य, (३) सड़कों का निर्माण, (४) पुलिस, (५) जनता की सहायता, बेकारों की आजीविका और बूढ़ों को पेन्शन, (६) गृह-निर्माण, और (७) म्युनिसिपल (स्थानीय) व्यापार।* यह कौंसिल जिला-कौंसिलों के कार्य का निरीक्षण करने के अतिरिक्त, बड़ी सड़कों और पुलों की मरम्मत करवाती है; किसानों को छोटे-छोटे खेत दिलाने का प्रबन्ध करती है; काउन्टी-पुलीस का नियन्त्रण करती है; धातृ-कार्य (नर्सिंग) और बच्चों की सुरक्षा सम्बन्धी नियमों का पालन कराती है। यह काउन्टी में प्रारम्भिक शिक्षा की उत्तरदायी है, और उच्च शिक्षा के लिए सहायता देती है। यह अस्पतालों, सुधार-गृहों और पागलखानों का प्रबन्ध तथा निरीक्षण करती है; और नाचघर, थियेटरों, गायन-गृह आदि का लाइसैंस भी देती है। यह निम्नलिखित विषयों के कानून को अमल में लाती है:—पशुओं की छूत की बीमारी, नाशक कृमि, जंगली पशु, तोल और माप, स्फोटक

* पाठक विचार करें कि इसकी तुलना में भारतवर्ष की स्थानीय-स्वराज्य-संस्थाओं का कार्यक्षेत्र कितना कम है।

पदार्थ, नदियों की गन्दगी आदि। काउन्टी-कौंसिल अपने कर्मचारियों को स्वयं नियत करती है। यह अपनी काउन्टी की सुव्यवस्था के लिए आवश्यक उपनियम बनाती है और उन्हें भंग करनेवालों पर जुर्माना कर सकती है। यह एक निर्धारित सीमा तक कर भी लगा सकती है; इसके करों को 'काउन्टी-रेट' कहते हैं। परन्तु आयका मुख्य साधन वह रकम है, जो इंगलैण्ड की सरकार द्वारा इसे खास-खास कामों के लिए मिलती है। कौंसिल का हिसाब एक आय-व्यय-निरीक्षक द्वारा जाँचा जाता है, जो स्वास्थ्य मन्त्री द्वारा नियत होता है।

जिला-कौंसिल—प्रत्येक जिला कौंसिल के सदस्य तीन साल के लिए चुने जाते हैं, परन्तु एक-तिहाई सदस्यों का चुनाव प्रति वर्ष होता है। जो सदस्य छः मास तक, बिना किसी विशेष कारण, कौंसिल की मीटिंग में अनुपस्थित रहता है, उसकी जगह खाली हो जाती है। सभापति सदस्यों द्वारा चुना जाता है। स्वास्थ्य विभाग के इन्सपेक्टर कौंसिल की मीटिंग में, आमन्त्रित किये जाने पर, भाषण दे सकते हैं।

जिला-कौंसिल के मुख्य कार्य ये हैं:—यह जिले की गलियों, बाज़ारों और नालियों की सफाई कराती है, सड़कों पर पानी छिड़कवाती है, मकानों का मैला और कूड़ा हटवाती है, स्वच्छ पानी का प्रबन्ध करती है, हानिकर खाद्य पदार्थों को फिंकवाती है। यह प्रधान सड़कों को छोड़कर अन्य सड़कें बनवाती है तथा उनकी मरम्मत करवाती है। छूत की बीमारियों को रोकने के लिए इसे विशेष अधिकार प्राप्त हैं। यह गाड़ियों, सरायों, और धातृ-गृह आदि का लाइसैंस देती है। यह मेलों का प्रबन्ध करती, तथा कारख़ानों आदि का समय निर्धारित करती है। नगर-जिला-कौंसिलों के विशेष काम ये हैं:—ये स्नानागार

और कपड़े धोने के स्थानों का प्रबन्ध करती हैं। कहीं आग लगे तो उसे बुझाने के लिए पानी का प्रबन्ध करना, इनका आवश्यक कर्तव्य है। ये कसाईखाने बनवाती हैं और ट्रामवे तथा छोटी लाइन की रेलें चलाती हैं। ये पुस्तकालय अजायबघर, सार्वजनिक उद्यान आदि भी बनवाती हैं।

जिला-कौंसिल की कुछ आमदनी फ़ीस और जुर्माने से हो जाती है, और उनकी शेष आय वह रकम है जो ब्रिटिश सरकार से उन्हें काउन्टी-कौंसिल द्वारा प्राप्त होती है। नगर-जिला-कौंसिलों को निर्धारित कर वसूल करने का अधिकार है। ग्राम-जिला-कौंसिलों का खर्च उस फण्ड से चलता है जो भिन्न-भिन्न पेरिशों से वसूल किये हुए 'दरिद्र-रक्षा-कर' ('पुअर-रेट') के एकत्र होने से बनता है।

म्युनिसिपल कौंसिल—म्युनिसिपल कौंसिलें उन बड़े-बड़े शहरों में होती हैं जो काउन्टी-कौंसिलों के अधिकार में नहीं हैं। इनमें मेयर, एलडरमेन, और साधारण सदस्य होते हैं। साधारण सदस्य तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं परन्तु तृतीयांश सदस्यों का चुनाव प्रतिवर्ष, सितम्बर की पहली तारीख को होता है। म्युनिसिपल कौंसिलों के निर्वाचकों की योग्यता वही होती है, जो काउन्टी-कौंसिल के निर्वाचकों की। 'ऐलडरमेन' साधारण सदस्यों द्वारा चुने जाते हैं। उनकी संख्या, साधारण सदस्यों की संख्या की एक-तिहाई रहती है। ये छः वर्ष के लिए चुने जाते हैं, पर आधे ऐलडरमेनों का चुनाव प्रति तीसरे वर्ष होता है। मेयर, कौंसिल द्वारा एक साल के लिए चुना जाता है; उसका अगले साल भी निर्वाचन हो सकता है। वह कौंसिल का सभापति होता है। वह 'म्युनिसिपल बरो' की ओर से आतिथ्य-सत्कार का कार्य करता है। वह कौंसिल की सब कमेटियों का

सदस्य, और 'बरो' की न्यायाधीश-समिति का सभापति, होता है। यदि बिना विशेष कारण के, मेयर दो मास तक, और 'ऐलडरमेन' या साधारण सदस्य छः मास तक, अपने 'बरो' से अनुपस्थित रहें, तो उनका स्थान खाली हो जाता है।

कौंसिल 'बरो' के लिए उपनियम बना सकती हैं। ये उनकी जायदाद का प्रबन्ध करती हैं। जिन 'बरों' में दस हजार से अधिक जनसंख्या है, वे प्रारम्भिक शिक्षा के लिए उत्तरदायी होती हैं। ये जानवरों की छूत सम्बन्धी बीमारियों, नाशक कृमियों, तोल माप, और खाद्य पदार्थों के विक्रय सम्बन्धी कानूनों को अमल में लाती हैं। जिन 'बरों' की जनसंख्या बीस हजार से अधिक है, वे पुलिस का भी प्रबन्ध कर सकती हैं।

'बरों' की आय के साधन ये हैं:—फ़ीस, जायदाद की आमदनी, विशेष कार्यों के लिए ब्रिटिश सरकार से प्राप्त धन; और 'बरों' के कर।

पेरिश-कौंसिल—पेरिश-कौंसिल में सभापति, और ५ से १५ तक सदस्य रहते हैं। ये तीन वर्ष के लिए, १५ अप्रेल को चुने जाते हैं। यदि बिना विशेष कारण, कौंसिल का सदस्य, उसकी बैठक से, छः मास से अधिक समय तक अनुपस्थित रहे तो उसका स्थान खाली हो जाता है। पेरिश-कौंसिल जन्म-मृत्यु तथा विवाह-शादियों का लेखा रखती है, और किसानों को भूमि दिलाने का प्रबन्ध करती है। यह निम्नलिखित कार्य भी कर सकती है:—गाँव में रोशनी; पहरा देना; और स्मशान, स्नानागार, आग बुझाने के ऐंजिन, मनोरंजन-स्थान आदि का प्रबन्ध करना।

गरीबों और अपाहिजों को सहायता पहुँचाने के लिए कुछ पेरिशों की

यूनियन या समिति स्थापित की गयीं हैं। 'बरों' में भी ऐसी समितियों की स्थापना हुई है। उक्त समिति की एक संस्था संरक्षक बोर्ड (बोर्ड आफ गार्डियन्स) कहलाती है। उसका प्रधान कार्य दरिद्र लोगोंको भोजन-वस्त्र देना तथा चिकित्सा सम्बन्धी सहायता पहुँचाना और मृतकों के गाड़ने का प्रबन्ध करना है। यह दरिद्रों की आजीविका के लिए काम की सुव्यवस्था करता है; दरिद्रालयों और अपाहिजखानों का प्रबन्ध करता है। बोर्ड की आय का मुख्य साधन दरिद्र-रक्षा-कर है।

लन्दन का स्थानीय शासन—इंगलैंडकी राजधानी लंदन के स्थानीय शासन की एक पृथक् ही व्यवस्था है। इसका स्थानीय शासन विशेषतया दो संस्थाओं द्वारा होता है:— (१) लन्दन कारपोरेशन, और (२) लन्दन काउन्टी-कौंसिल। लन्दन कारपोरेशन का कार्य क्षेत्र प्राचीन लन्दन शहर है और लन्दन काउन्टी-कौंसिल का कार्य क्षेत्र है, उसके बाहर, नया बसा हुआ लन्दन शहर।* लन्दन कारपोरेशन का कार्य लार्ड मेयर, एलडरमेन, और साधारण सदस्यों द्वारा होता है। लन्दन काउन्टी कौंसिल नवीन लन्दन शहर की समस्त (अट्ठाईस) काउन्टी-कौंसिलों के ऊपर है। इसका सङ्गठन तथा अधिकार इंगलैंड की अन्य काउन्टी-कौंसिलों के समान होता है। इसे लन्दन कारपोरेशन पर भी कुछ अधिकार प्राप्त हैं।

स्थानीय संस्थाएँ और केन्द्रीय सरकार—उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में, यहाँ स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का निरीक्षण और नियंत्रण-अधिकार क्रमशः बढ़ा है। अब (१) निम्न-लिखित विभाग व्यापक रूप से उनका निरीक्षण करते हैं—स्वास्थ्य-

* लन्दन की कुल जनसंख्या ८७ लाख है; यह संसार भर के किसी भी राज्य की राजधानी की जनसंख्या से अधिक है।

मंत्री, शिक्षा बोर्ड, व्यापार बोर्ड यातायात-मंत्री, गृह-कार्यालय (होम-आफिस) और बिजली-कमिश्नर। प्रत्येक विभाग के अधिकारी का अपने-अपने विषय सम्बन्धी अधिकार है, उदाहरणवत् स्वास्थ्य-मंत्री स्थानीय संस्थाओं के स्वास्थ्य-कार्य का निरीक्षण करता है। (२) कुछ विषयों में केन्द्रीय मंत्री ऐसे नियम बना देते हैं, जो स्थानीय संस्थाओं को पालन करने होते हैं। (३) साधारणतया स्थानीय संस्थाओं को ऋण तभी मिलता है, जब केन्द्रीय विभाग उसकी स्वीकृति दे दे। (४) विशेष कार्यों के लिए केन्द्रीय सरकार की सहायता उसी दशा में मिलती है, जब वह कार्य सन्तोषजनक रीति से किया जाय। (५) स्थानीय संस्थाओं के हिसाब की जांच ज़िले के लेखा-परीक्षक (आडीटर) करते हैं, जिनकी नियुक्ति स्वास्थ्य-मंत्री द्वारा होती है। (६) जनता स्थानीय अधिकारियों के सम्बन्ध में, केन्द्रीय विभागों से शिकायत कर सकती है; इस पर उसकी जांच होकर आवश्यक कार्यवाही की जाती है।*

स्मरण रहे कि केन्द्रीय सरकार केवल निरीक्षण या नियंत्रण करती है, वास्तविक कार्य-संपादन तो स्थानीय संस्थाओं द्वारा ही होता है, जो जनता द्वारा निर्वाचित सदस्योंकी होती हैं। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त स्थायी कर्मचारी किसी कार्य को स्वयं नहीं करते। इस प्रकार यहाँ अधिकारों का केन्द्रीकरण नहीं है, स्थानीय संस्थाएं अपने-अपने क्षेत्र में स्वतंत्रता का उपयोग करती हैं, और ब्रिटिश जनता की, विविध क्षेत्रों में, स्वाधीनता बढ़ाने में सहायक होती हैं।

*Comparative Major European Govts.—J. G. Heinberg.

द्वितीय खंड

ब्रिटिश साम्राज्यके अन्य भागों का शासन

तेरहवाँ परिच्छेद

ब्रिटिश साम्राज्य का साधारण परिचय

प्राक्कथन—इस भू मंडल में, समय-समय पर अनेक साम्राज्य हुए हैं। अब भी कई साम्राज्य विद्यमान हैं। उनके विविध गुण दोषों का विवेचन न करके, हमें यहाँ केवल यही वक्तव्य है कि इस समय जनसंख्या और विस्तार के विचार से ब्रिटिश साम्राज्य सब से बढ़ा-चढ़ा है। इसके सब भागों का कुल क्षेत्रफल १३४ लाख वर्ग मील, और जनसंख्या, लगभग ५० करोड़ है। यह क्षेत्रफल और जनसंख्या, संसार भर के क्षेत्रफल और जनसंख्या के चौथाई के लगभग है। हाँ, इस साम्राज्य में इसके मातृ-देश के अतिरिक्त जो विविध भू-भाग सम्मिलित है, वे सब इंगलैंड के अधीन-देश ही नहीं है; कई उपनिवेश स्वराज्य-प्राप्त भी हैं। विशेष ध्यान देने की बात यह है कि ब्रिटिश साम्राज्य की ५० करोड़ जनसंख्या में से पांच करोड़ तो साम्राज्य के मातृ-देश (ग्रेट-ब्रिटेन और उत्तरी आयर्लैंड) में ही है। शेष पैंतालीस करोड़ में से लगभग उनतालीस करोड़ जनता अकेले भारतवर्ष की है। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य की महत्ता का प्रधान आधार भारतवर्ष ही है। भारत-

रहित ब्रिटिश साम्राज्य का अन्य साम्राज्यों की तुलना में विशेष स्थान नहीं रहता।

ब्रिटिश साम्राज्य का निर्माण कैसे हुआ?—साम्राज्य-स्थापना के विचार से इंगलैण्ड की स्थूल रूप से तीन अवस्थाएँ रहीं हैं:—(१) सोलहवीं शताब्दी में कुछ भू-भागों का पता लगाया गया। (२) सतरहवीं शताब्दी में कुछ उपनिवेश बसाये गये, (३) पीछे विजय, कूट नीति, और कौशल-पूर्ण संधियों से अनेक प्रदेशों पर अधिकार किया गया। जिन भू-भागों का इस साम्राज्य में समावेश हुआ है उनमें से एक भारतवर्ष को छोड़कर शेष या तो वीरान थे, या वहाँ ऐसे आदमी रहते थे, जिन बेचारों के पास 'सभ्य' मनुष्यों से लड़ने के साधन या इच्छा न थी। योरपियनों की जो टोली जहाँ पहुंच गयी, उसने वहाँ अधिकार कर लिया। पंदरहवीं शताब्दी के अन्त में योरपीय देशों के साहसी यात्री नये-नये भूखंडों की खोज में निकले।* स्पेन पुर्तगाल इस कार्य में सब से आगे थे। फ्रांस और हालैंड भी इंगलैंड से पहले कार्यक्षेत्र में आगये थे। अतः अंगरेजों की इन्हीं देशों के आदमियों से मुठभेड़ हुई, नये प्रदेशों के मूल निवासियों से नहीं। अन्य योरपियन, आरम्भ में अंगरेजों की अपेक्षा बलवान थे, तथापि वे हार गये। इसका एक कारण यह हुआ कि उन्हें लड़ाई के लिए अपने-अपने देशों से जन-धन का प्रबन्ध करना पड़ता था, इसके विपरीत, अंगरेज तत्कालीन इंगलैण्ड के धार्मिक अत्याचार आदि के कारण नये प्रदेशों में ही जाकर बस गये थे। इसके अतिरिक्त, अन्य योरपियन देशों की शक्ति बटी हुई थी। वे योरप में भी प्रभुता प्राप्त

* इसका आशय यही है कि ये प्रदेश उस समय तक योरपवालों को ज्ञात न थे।

करने के लिए आपस में लड़ते रहते थे, और विदेशों में भी पैर जमाना चाहते थे। पारस्परिक प्रतिद्वंदिता के कारण इनके बल का बहुत क्षय होचुका था; अतः पीछे से इंगलैंड को इन पर विजय पाने में विशेष असुविधा न हुई। स्पेन वालों ने सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग (सन् १५८८ ई०) में इंगलैंड पर आक्रमण किया, परन्तु उस समय दवी शक्ति से वह स्वयं ही परास्त होगया। खाडी में भयकर तूफान आजाने से उसका 'अरमाडा' नाम का अजेय बेड़ा नष्ट होगया और इंगलैंड की, अन्य देशों पर, धाक जम गयी। फिर इसने दूसरों के द्वारा खोज किये हुए, और दूसरों के साफ किये हुए नये देशों पर क्रमशः अधिकार करने की ठानी, और उपर्युक्त कारणों से उनमें विजयी होगया। इस प्रकार ब्रिटेन की साम्राज्य-पताका अमरीका, अफरीका, और आस्ट्रेलिया आदि के विविध भागों तथा अनेक टापुओं पर फहराने लगी।

यह तो साम्राज्य के उन भागों की बात हुई, जो वीरान थे, जिनके निवासी असभ्य थे। भारतवर्ष ऐसा नहीं था। इसे वे विजय करने के लिए नहीं आये थे। इतने बड़े देश को थोड़े-से आदमी विजयकरने का विचार ही कैसे कर सकते थे! यहाँ आने का उनका प्रथम प्रकट उद्देश्य व्यापार करना था, और वे विनीत व्यापारी के रूप में ही यहाँ आये। धीरे-धीरे अपनी कोठियों की रक्षा के लिए ये सैनिक प्रबन्ध करने लगे। उन दिनों यहाँ पुर्तगाल, हालैंड और फ्रांस वाले भी अड्डा जमाने के प्रयत्न में थे, उनकी अंगरेजों से ईर्षा और प्रतिद्वन्दिता होनी स्वाभाविक थी। विदेशी शक्तियों के आपस में घोर युद्ध हुए, जिनमें अज्ञान अथवा फूट के कारण भारतवासियों ने भी भोग दिया। अन्ततः विजय अंगरेजों की रही, और इन्होंने सन् १८५७ तक छल-बल या कौशल से अधिकांश भारत पर प्रत्यक्ष अथवा गौण रूप से

अपना अधिकार जमा लिया। स्मरण रहे कि योरपियन शक्तियों ने प्रायः युक्तियों और षड्यंत्रों से काम लिया। और, केवल कुछ विशेष दशाओं में ही तलवार का उपयोग किया। पुनः योरपियन सैनिकों की संख्या भी उस समय यहाँ बहुत ही कम थी। अंगरेजों ने अधिकतर यहाँ के ही एक प्रान्त के सिपाहियों को धन या पद का प्रलोभन देकर उनके बल पर दूसरे प्रान्त को, और कभी-कभी उसी प्रान्त को 'विजय' किया। इस प्रकार उन्होंने अधिकांश में भारतवासियों की ही सहायता से, उनकी ही तलवार से, इस देश में अपना साम्राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त की।

साम्राज्य-निर्माण के कारण—ब्रिटिश साम्राज्य के निर्म्माण में निम्नलिखित बातें सहायक हुई हैं* :—

(क) इंगलैंड की भौगोलिक स्थिति, जिसका वर्णन प्रथम खंड के आरम्भ में किया जा चुका है, इस कार्य के लिए अनुकूल थी। देश छोटा तथा चारों ओर से समुद्र से घिरा होने के कारण यथेष्ट सुरक्षित भी था। पुनः यहाँ जीवन-निर्वाह की अनेक कठिनाइयों से विवश होकर, अंगरेज़ों को बाहर जाने-आने तथा कठोरताओं को सहन करने की आदत डालनी पड़ी। इससे इन्हें उपनिवेश बसाने में सुविधा मिली।

(ख) इंगलैंड की मध्यकालीन धार्मिक असहिष्णुता ने भी अंगरेज़ों को साम्राज्य-निर्म्माण में समुचित सहायता दी। जिन लोगों को धार्मिक अत्याचार न सह सकने के कारण स्वदेश में रहना कठिन होगया, वे जहाज़ों पर चढ़कर इधर-उधर निकल पड़े और अनेक

*इस विषय पर श्री० केला जी की 'साम्राज्य और उनका पतन' पुस्तक में विशेष प्रकाश डाला गया है।

विपत्तियों का दृढ़ता-पूर्वक सामना करके विविध भू-खंडों में पहुँच गये।

(ग) अंगरेज़ पादरियों का भी साम्राज्य-निर्माण में यथेष्ट भाग है। अपने राज्य या देश-बन्धुओं की सहायता प्राप्त कर, ये अपने धर्म और अपनी सभ्यता का प्रचार करने के लिए, दूर देशों में गये। क्रमशः इन्होंने उनके निवासियों को ईसाई बनाया। जब-जब इन नये ईसाइयों तथा पुराने धर्म वालों का विरोध हुआ और अशान्ति मची तो इन्होंने उसके अत्युक्ति-पूर्ण सम्वाद भेजकर अपने देशवालों की तथा अपने मतानुयायी अन्य लोगों की यथेष्ट सहानुभूति प्राप्त की, और अन्ततः सैनिक शक्ति का प्रदर्शन करने पर अंगरेज़ों ने नये देश में कुछ-न कुछ अधिकार पा लिया।*

(घ) नेपोलियन ने यह कहकर अपनी, मनुष्य-स्वभाव को परखने की, योग्यता का अद्भुत् परिचय दिया था कि अंगरेज़ जाति दुकान-दारों की जाति है। अंगरेज़ों के व्यापार-कौशल ने भी इनके साम्राज्य की वृद्धि में विलक्षण योग दिया है। भारतवर्ष आदि अनेक देशों में पहले पहल व्यापार के नाते ही अगरेज़ों ने अपने पैर जमाये थे।

(च) अंगरेज़ों की महाजनी प्रकृति भी साम्राज्य-विस्तार में सहायक हुई है। संयुक्त-राज्य-अमरीका के भूतपूर्व राष्ट्रपति विलसन का यह कथन यथार्थ है कि पूंजी की चालें विजय की चालें हैं। जिस निर्बल देश

*श्री० डाक्टर बी० शिवराम ने अपनी पुस्तक (कम्पेरेटिव कालोनियल पोलिसी) में लिखा है कि केवल मिशनरियों के ही कार्य से ब्रिटिश साम्राज्य में आस्ट्रेलिया, फिजी, दक्षिण और मध्य अफ्रीका, सीरालोयन, बर्मा और गायना आदि महत्व-पूर्ण उपनिवेशों में अपनी जड़ जमायी इन तमाम भू-भागों में व्यापारिक सम्बन्ध या राजनैतिक नियंत्रण होने से बहुत पहले मिशनरियों के अड्डे बन गये थे।

ने अंगरेज़ों से रुपया उधार लिया, वह कालान्तर में इनका प्रभाव-क्षेत्र बन गया; इन्हें वहाँ व्यापार आदि की विशेष सुविधाएँ प्राप्त हो गयीं। आत्म-रक्षा के लिए इन्होंने वहां अपनी सेना रखली, और क्रमशः एक-एक मंज़िल तय करके, बहुधा ऋण की ज़मानत में देश का एक भाग गिरवी रखकर इन्होंने सारे देश में अपनी प्रभुता स्थापित करली। फ़ारिस, चीन, मिश्र आदि में कुछ-कुछ इसी प्रकार ब्रिटिश हस्तक्षेप हुआ।

अस्तु, अंगरेज़ विविध कारणों से बाहर गये, उन देशों की परिस्थिति देखी भाली। जहाँ जैसा मौका मिला, उससे लाभ उठाया और साम्राज्य स्थापित किया। भिन्न-भिन्न देशों का कुछ विशेष ऐतिहासिक विचार आगे प्रसंगानुसार किया जायगा।

साम्राज्य में रहनेवाली जातियां—मोटे तौर से साम्राज्य के भिन्न-भिन्न भाग दो श्रेणियों में विभक्त किये जा सकते हैं। एक श्रेणी में वे भाग हैं, जिनमें स्वय अगरेज़ों की या अन्य योरपीय जातियों के आदमियों की संख्या अथवा प्रभुता विशेष है। इनमें सभ्यता, विज्ञान, नीति आदि की विशेष उन्नति है। इन्हें स्वायत्त शासन के लगभग पूर्ण अधिकार हैं। दूसरी श्रेणी में वे भाग हैं जिनके निवासी ग़ैर-योरपियन जातियों के हैं, जिनमें विविध प्रकार की उन्नति बहुत कम है, जो आधुनिक सभ्यता में पिछड़े हुए माने जाते हैं, या जिनमें पारस्परिक मतभेद है तथा संगठन का अभाव है। ये भाग परतंत्र है।

अब हम यह विचार करते हैं कि राजनैतिक दृष्टि से इस साम्राज्य के कितने भाग हैं।

राजनैतिक भाग—ब्रिटिश साम्राज्य का संगठन बहुत

पेचीदा है। मोटे तौर से इसके (मातृ-देश के अतिरिक्त) राजनैतिक भाग निम्नलिखित हैं:—

(१) डोमिनियन या स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश। इनमें (क) केनेडा, (ख) दक्षिण अफ्रीका का यूनियन, (ग) आस्ट्रेलिया, (घ) न्यूजीलैंड, (च) न्यूफाउंडलैंड और (छ) आयर (आयलैंड) हैं। इनके दो भेद किये जा सकते हैं:— [अ] जो उपनिवेश है, और [आ] जो उपनिवेश नहीं हैं। ऊपर जो छः डोमिनियन बतायी गयी हैं, उनमें से प्रथम पाँच तो (स्वराज्य-प्राप्त) उपनिवेश ही हैं, केवल आयर ही ऐसा है, जो उपनिवेश नहीं है।

(२) भारतवर्ष। इसके एक भाग (ब्रिटिश भारत) के प्रान्तों में अंशत: उत्तरदायी शासनपद्धति प्रचलित है, और दूसरे भाग अर्थात् देशी राज्य, एक प्रकार से भारत-सरकार के ही रक्षित राज्य हैं।

(३) उपनिवेश-विभाग के अधीन भू-भाग। इनमें से अधिकांश उपनिवेश हैं। इनकी संख्या बहुत बड़ी है। इनमें से कुछ में उत्तरदायी शासन आरम्भ किया गया है। उदाहरणवत् सीलोन (लंका)।

(४) रक्षित राज्य (प्रोटेक्टेड स्टेट्स)। इनमें प्रभुत्व तो अपने-अपने राजा का है, परन्तु ब्रिटिश सरकार को बाहरी विषयों में, अथवा बाहरी और भीतरी दोनों प्रकार के विषयों में, कुछ राजनैतिक अधिकार हैं। उदाहरणवत्, सुडान।

जब किसी दुर्बल शासक को किसी आक्रमणकारी का भय होता है, अथवा जब उस पर कोई आक्रमण कर देता है, तो वह प्रायः अपनी रक्षा के लिए या तो आक्रमणकारी राज्य की ही, अथवा किसी अन्य

बलिष्ट राज्य की, शरण लेकर उसकी कुछ अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाता है। इस प्रकार वह अपने राज्य को पूर्णतः पराजित तथा पराधीन बनाने की जोखम उठाने की अपेक्षा, उसे उसका रक्षित राज्य बनाना स्वीकार कर लेता है। संरक्षक बन जाने वाले राज्य को अपने रक्षित राज्य में कुछ अधिकार सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। अतः बहुधा बलवान राज्यों की यह इच्छा रहती है कि अधिक से-अधिक भू-भाग हमारी संरक्षकता स्वीकार करलें। वे इस बात का प्रयत्न करते रहते हैं कि अवसर मिलते ही, वे उन राज्यों को अपनी संरक्षकता में ले आवें, जो उनसे निर्बल होने पर भी उनके अधीन न हों।

रक्षित राज्यों के मुख्य लक्षण ये होते हैं: (क) ये संरक्षक राज्य के (अधीन) अंग नहीं होते, (ख) संरक्षक राज्य उनके बाहरी मामलों के सम्बन्ध में पूर्ण अधिकारी होता है, कोई अन्य राज्य इन राज्यों से स्वतंत्र राजनैतिक सम्बन्ध नहीं कर सकता, यदि कोई राज-नैतिक सम्बन्ध स्थापित होता है तो संरक्षक राज्य द्वारा ही हो सकता है। (ग) संरक्षक राज्य को अपने रक्षित राज्य की शासनपद्धति में ऐसी व्यवस्था करनी होती है कि वहाँ अन्य राज्यों की जनता के नागरिक अधिकारों का उचित ध्यान रहे। (घ) रक्षित राज्य होने से बहुधा उसके अधीन राज्य बनजाने का मार्ग प्रशस्त होजाता है।

(४) आदेश-युक्त राज्य (मेंडेटरी स्टेट्स)। ये राज्य पिछले योरपीय महायुद्ध (१६१४—१८) में मित्र-राष्ट्रों द्वारा जीते गये थे। पीछे राष्ट्र-संघ की ओर से, शासन प्रबन्ध के लिए, ये ब्रिटिश सरकार को दिये गये। इनके शासन के वास्ते ब्रिटिश सरकार राष्ट्र-संघ के प्रति उत्तरदायी है। उदारणवत्, मेसोपोटेमिया।

इन राज्यों में शासक-सरकारों को कानून और शासन सम्बन्धी सब अधिकार प्राप्त हैं, और वे अपने-अपने शासित राज्य के मूल

निवासियों की मानसिक, नैतिक, आर्थिक आदि सब प्रकार की उन्नति करने के लिए राष्ट्र-संघ के प्रति उत्तरदायी हैं। संघ की ओर से उन्हें यह आदेश रहता है कि इन राज्यों में दास-प्रथा तथा बेगार बन्द रहे; हथियार और युद्ध सम्बन्धी सामान के प्रवेश पर नियन्त्रण रहे; मूल निवासियों के लिए शराब न दी जाय, तथा उन्हें पुलिस या आन्तरिक रक्षा के अतिरिक्त, अन्य सैनिक शिक्षा न दी जाय; इन राज्यों में किसी तरह का किला या सैनिक अड्डा न बनाया जाय; राष्ट्र-संघ के सब सदस्यों को वाणिज्य व्यापार करने का समान अवसर रहे; पादरी बेरोक जा सकें और धार्मिक स्वतंत्रता रहे। अधिकांश नियमों की उत्तमता में किसी को विशेष आपत्ति नहीं हो सकती। परन्तु क्या इनके अनुसार काम भी होता है?

ब्रिटिश साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों तथा उपनिवेश-विभाग के अधीन भागों की शासनपद्धति आगे स्वतंत्र परिच्छेदों में बतायी जायगी। अन्य भागों के विषय में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

भारतवर्ष की शासनपद्धति का सविस्तर विचार श्री० केला जी की 'भारतीय शासन' (आठवाँ संस्करण) में किया गया है। इसका एक छोटा संस्करण 'सरल भारतीय शासन' के नाम से प्रकाशित हो चुका है।

चौदहवाँ परिच्छेद

स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश और ब्रिटिश सरकार

डोमिनियन स्टेटस—ब्रिटिश साम्राज्य के प्रत्येक स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश की शासनपद्धति के सम्बन्ध में अलग-अलग लिखने से पूर्व इस बात का विचार किया जाना आवश्यक है कि इन प्रदेशों का

ब्रिटिश सरकार से क्या सम्बन्ध है। स्मरण रहे कि यहाँ 'स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश' शब्द का व्यवहार उन राज्यों के लिए किया जाता है, जिन्हें अंगरेजीमें डोमिनियन कहा जाता है। इन प्रदेशों के पद या स्थिति का समानार्थवाची अंगरेजी शब्द 'डोमिनियन स्टेटस' है। और, क्योंकि इन प्रदेशों को क्रमशः अधिकाधिक स्वराज्य प्राप्त होता रहा है, और इस समय ये आन्तरिक तथा बाहरी सब विषयों में प्रायः पूर्णतया स्वराज्य-प्राप्त हैं, अतः 'डोमीनियन स्टेटस' का अर्थ व्यवहार में साम्राज्यान्तर्गत स्वराज्य होगया है।

कुछ लेखक 'डोमिनियन स्टेटस' के लिए 'औपनिवेशिक स्वराज्य' शब्द का प्रयोग करते हैं; यह वास्तव में ठीक नहीं है। यद्यपि, जैसा पहले बताया गया है; छः डोमिनियनों में से पाँच उपनिवेश हैं, पर एक ऐसो भी तो है, जो उपनिवेश नहीं है। भारतवर्षके प्रसंगमें औपनिवेशिक स्वराज्य का प्रयोग असंगत है; भारतवर्ष अंगरेजों का उपनिवेश नहीं है।

साम्राज्यान्तर्गत स्वराज्य-प्राप्ति का क्रम— ब्रिटिश उपनिवेशों की स्थापना सतरहवीं शताब्दी के आरम्भ से हुई। तभी से उनके शासन का भी प्रश्न अधिकारियों के सामने रहा है। सब उपनिवेशों को उनका वर्तमान पद एक ही रीति से प्राप्त नहीं हुआ। भिन्न-भिन्न समय में भी शासन-सुधार का क्रम अलग-अलग रहा है। कभी तो परिवर्तन की गति बहुत मंद रही है, और कभी वह खासी तेज होगयी है। विशेष प्रगति उन उपनिवेशों में हुई, जिनमें अंगरेजों या योरपियनों की संख्या अधिक थी। पहले उपनिवेशों में आन्तरिक स्वशासनाधिकार पर जोर दिया गया, पीछे कुछ ने अपने वैदेशिक विषयों को स्वयं नियंत्रित करने की ओर ध्यान दिया। इस विकास का अन्तिम फल स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश हैं, जिन्हें ग्रेट-ब्रिटेन की बहुत-कुछ

समानता का पद मिला हुआ है, और जो उसके साथ मिल कर 'ब्रिटिश कामनवेल्थ' बनाते हैं।*

साम्राज्यान्तर्गत भागों के स्वराज्य की प्रगति एक शताब्दी से हुई है, तथापि गत तीस वर्ष से इसमें बहुत वृद्धि हुई है; इसका मुख्य कारण यह है जब से इन प्रदेशों ने महायुद्ध (१९१४—१८) में भाग लिया, उनमें राष्ट्रीयता की भावना का बहुत तेज विकास हुआ और वे विदेश-नीति में भी अपना स्वतंत्र और स्पष्ट मत सूचित करने के इच्छुक हुए। पीछे शान्ति-परिषद और राष्ट्र-संघ में सम्मिलित होने से उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय महत्व मिल गया। सन् १९२६ की साम्राज्य-परिषद ने ब्रिटिश साम्राज्य की तत्कालीन परिस्थिति को नियमानुसार मान्य किया है। इसके बाद वैधानिक बातें प्रायः उस परिषद की रिपोर्ट में सूचित सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण या तर्कयुक्त परिणाम हैं।

पारस्परिक परामर्श साधन; इम्पीरियल कान्फ्रेंस— उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक ब्रिटिश सरकार उपनिवेशों के मामलों में बहुत-कुछ स्वयं ही निर्णय कर देती थी, उनसे विशेष परामर्श नहीं किया जाता था। सर्व प्रथम 'कालोनियल कान्फ्रेंस' (उपनिवेश-परिषद) सन् १८८७ में महारानी विक्टोरिया की जुबिली के अवसर पर हुई। उपनिवेशों के विषय में कोई विशेष निर्णय नहीं हुआ, उससे पूर्व साम्राज्य के संघ-शासन की चर्चा थी, उसका भी

* 'कामनवेल्थ' का अर्थ जनपद, स्वतंत्र समुदाय, जनता का राज्य आदि है। 'ब्रिटिश कामनवेल्थ' शब्द बहुधा ब्रिटिश साम्राज्यान्तर्गत भागों के लिए ही प्रयुक्त किया जाता है। परन्तु ब्रिटिश कामनवेल्थ कहते समय समस्त ब्रिटिश साम्राज्य की एकता पर इतना जोर नहीं दिया जाता, जितना इस बात पर कि साम्राज्य में कई (छः) भाग ऐसे हैं, जो प्रायः इंगलैण्ड की बराबरी के हैं, और अपने आंतरिक या बाह्य विषयों में एक दूसरे के अधीन नहीं हैं।

प्रस्ताव उपस्थित न किया गया। पश्चात् इस परिषद के अधिवेशन १८९७, १९०२ और १९०७ में हुए। सन् १९०७ ई० से परिषद का नाम 'इम्पीरियल कान्फ्रेन्स' या साम्राज्य परिषद होगया। इसके अधिवेशन महत्वपूण होने लगे। यह विचार हुआ कि स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों के प्रधान मंत्री, तथा साम्राज्य के अन्य भागों की ओर से इंगलैंड का उपनिवेश-मंत्री इसमें सम्मिलित हों, सभापति का पद इंगलैंड का प्रधान मंत्री ग्रहण किया करे और अधिवेशन चौथे वर्ष हो, परिषद के प्रस्ताव परामर्श रूप में ही हों, विरुद्ध मत रखने वालों के लिए वे वाध्य न हों।

इम्पीरियल कान्फ्रेंस का प्रथम अधिवेशन सन् १९११ में हुआ। ग्रेट-ब्रिटेन चाहता था कि उपनिवेश उसकी जल सेना के लिए सहायता दें, परन्तु आस्ट्रेलिया आदि ने अपनी छोटी-छोटी जल सेनाएँ अलग रखना ही अच्छा समझा। सन् १९१५ में महायुद्ध के कारण कान्फ्रेंस का साधारण अधिवेशन न होसका पश्चात् सन् १९१७ में इंगलैंड के प्रधान मंत्री ने साम्राज्य की आवश्यकताओं पर विचार करने के लिए स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों के प्रधान मंत्रियों को आमंत्रित किया। यह कान्फ्रेंस साम्राज्य - युद्ध - परिषद कहलायी। केवल युद्ध के सम्बन्ध में विचार करनेवाली संस्था को 'इम्पीरियल वार कैबिनेट' (साम्राज्य-युद्ध-मन्त्रिमण्डल) नाम दिया गया। कान्फ्रेंस में निश्चय किया गया कि स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों के स्वायत्त शासन और घरू मामलों के पूर्ण नियन्त्रण सम्बन्धी वर्तमान अधिकार ज्यों-के-त्यों बने रहेंगे। इन उपनिवेशों को साम्राज्य-कामनवेल्थ के स्वतन्त्र राष्ट्र और भारतवर्ष को उसका एक महत्वपूर्ण अंग माना जायगा। स्वाधीन उपनिवेशों तथा भारतवर्ष को

वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करने का पूर्ण अधिकार होगा। इस बात की यथेष्ट व्यवस्था की जायगी कि जिन महत्वपूर्ण विषयों का सम्बन्ध समस्त साम्राज्य से हो, उनका निर्णय पारस्परिक परामर्श से किया जाय; और, उस परामर्श के आधार पर, भिन्न-भिन्न सरकारों के निश्चयानुसार सम्मिलित कारवाई की जाय।

योरपीय महायुद्ध (१९१४-१८) में उपनिवेशों तथा भारतवर्ष ने इंगलैंड की खूब सहायता की। महायुद्ध समाप्त होने पर स्वाराज्य-प्राप्त उपनिवेशों ने वार्साई के संधि-पत्र पर हस्ताक्षर करके राष्ट्र-संघ की स्वतंत्र सदस्यता प्राप्त की। तब से ये प्रदेश प्राय: ब्रिटेन की बराबरी के होगये।

साम्राज्य-परिषद में गत योरपीय महायुद्ध से पहले भारतवर्ष की ओर से कोई पृथक् व्यक्ति भाग नहीं लेता था; अब भारतमंत्री, तथा भारत-सरकार से नामज़द किये हुए प्रायः दो आदमी इसके अधिवेशनों में शामिल होते हैं। परन्तु जब कि स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों की ओर से इसमें सम्मिलित होनेवाले, उनके मंत्री अपने-अपने राज्यों के प्रति उत्तरदाता होते हैं, और इसलिए उनका मत प्रकट करते हैं, भारत-मंत्री और उसके सलाहकार, भारतवासियों द्वारा निर्वाचित या उनके प्रति उत्तरदायी नहीं होते और उनका वास्तविक मत प्रकट नहीं करते। ये वास्तव में भारतवर्ष के प्रतिनिधि नहीं कहे जा सकते।

यद्यपि भारतवर्ष की ओर से भी वार्साई के संधि-पत्र पर हस्ताक्षर किये गये थे, और यह राष्ट्र-संघ का सदस्य भी बनाया गया, इसे वह राजनैतिक पद प्राप्त नहीं हुआ, जो स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों को मिला।

साम्राज्य-परिषद के, सन् १९२६ के अधिवेशन में सर्वसम्मति से से यह स्वीकृत हुआ कि साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों का स्थान परस्पर में समान है। आन्तरिक अथवा विदेशी विषयों में कोई दूसरे के अधीन नहीं है। बादशाह के प्रति राजभक्ति रखते हुए, सब एक

सम्मेलन-सूत्र में बंधे है, और ब्रिटिश कामनवेल्थ के सदस्यों की हैसियत से स्वतंत्रता-पूर्वक सम्बन्धित है।

उक्त परिषद ने यह भी निश्चय किया कि स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशोंका गवर्नरजनरल बादशाह का प्रतिनिधि है, उसका उस प्रदेश के शासन सम्बन्धी महत्वपूर्ण विषयों में वही पद है, जो बादशाह का ग्रेट-ब्रिटेन में है। परिषद ने इन प्रदेशों के संधि करने के भी कुछ अधिकारों को मान्य किया। उसकी सिफारिश के अनुसार इन प्रदेशों की भावी शासन-व्यवस्था के सम्बन्ध में विचार करने के लिए एक कमेटी सन् १९२९ में नियुक्त की गयी। इस कमेटी ने सिफारिश की कि ब्रिटिश पार्लिमेंट सन् १९२६ की परिषद की घोषणा के आधार पर एक कानून बनाये। साम्राज्य-परिषद के आगामी अधिवेशन में, जो सन् १९३० में हुआ, इस विषय पर आवश्यक विचार हुआ। अन्ततः पार्लिमेंट ने परिषद के सन् १९२६ और १९३० के प्रस्तावों को अमल में लाने के लिए सन् १९३१ में 'वेस्टमिन्स्टर-स्टेट्यूट' नामक कानून बनाया। स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों और आयरिश फ़्री स्टेट ने इसी वर्ष इस कानून को स्वीकार कर लिया। अब ब्रिटिश सरकार और स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों का सम्बन्ध इसी कानून के अनुसार है।

वेस्टमिंस्टर कानून—इस कानून की प्रस्तावना में कहा गया है कि (क) क्योंकि बादशाह ब्रिटिश कामनवेल्थ के सदस्यों के स्वतंत्र मिलन का प्रतीक है, और वे सदस्य बादशाह के प्रति राजभक्ति रखते हुए परस्पर में सम्मिलित हैं, बादशाह के उत्तराधिकार, शाही पद या सम्मान आदि के कानून के परिवर्तन के सम्बन्ध में ब्रिटिश पार्लिमेंट के साथ-साथ स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों की पार्लिमेंटों की भी स्वीकृति

आवश्यक होगी। (ख) अब से, ब्रिटिश संयुक्त राज्य की पार्लिमेंट द्वारा बनाया हुआ कोई कानून किसी स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश के कानूनों का भाग नहीं माना जायगा, जब तक कि वह प्रदेश उसके लिए प्रार्थना न करे, और उससे सहमत न हो।

इस कानून में 'डोमिनियन' (स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश) की कोई परिभाषा या व्याख्या न देकर उनके नाम बतला दिये गये हैं। ये प्रदेश, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, निम्नलिखित हैं:—केनेडा दक्षिण अफ्रीका का यूनियन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, न्यूफाउंडलैंड, और आयरिश फ्री स्टेट (जिसे अब 'आयर' कहा जाता है)। इस कानून की मुख्य बात यह है कि साम्राज्य के किसी स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश का भविष्य में बनने वाला कोई कानून या उसका कोई अंश इस आधार पर रद्द नहीं होगा कि वह ब्रिटिश पार्लिमेंट द्वारा बनाये हुए कानून या नियम से असंगत है। स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश की पार्लिमेंट को यह अधिकार होगा कि वह ब्रिटिश पार्लिमेंट के कानून को उस अंश तक रद्द या संशोधित करे, जहाँ तक उसका सम्बन्ध उक्त प्रदेश से हो।

अब स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों की शासन-नीति सम्बन्धी कुछ मुख्य-मुख्य बातों पर ब्यौरेवार प्रकाश डाला जाता है।

गवर्नर जनरल—स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों में से, अब आयर्लैंड में तो गवर्नर-जनरल है ही नहीं। न्यूजीलैंड और न्यूफाउंडलैंड ने पहले के समान क्रमशः अपने गवर्नर-जनरल और गवर्नर को बादशाह के एवं ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि के रूप में रखा है। शेष तीन उपनिवेशों में गवर्नर-जनरल का वही स्थान है, जो बादशाह का इंगलैण्ड की शासन व्यवस्था में है; वह बादशाह का प्रतिनिधि है, न

कि ब्रिटिश सरकार या उसके किसी अंग का।* अब ब्रिटिश सरकार और साम्राज्य के अन्य स्वतंत्र भागों की सरकारों में जो पत्रव्यवहार होता है वह प्रधान मन्त्रियों द्वारा होता है, न कि गवर्नर-जनरल द्वारा। गवर्नर-जनरल को मुख्य मुख्य सरकारी कागज़ों की कापी भेज दी जाती है, उसे प्रबन्धकारिणी सभा के निश्चयों की सूचना उसी प्रकार दी जाती है, जिस प्रकार इंगलैंड के बादशाह को वहाँ के मंत्रिमंडल के निश्चयों की।

गवर्नर-जनरल बादशाह का प्रतिनिधि होने के कारण सीधा उससे अथवा उसके प्राइवेट सेक्रेटरी से पत्रव्यवहार कर सकता है। गवर्नर-जनरल की नियुक्ति बादशाह द्वारा ही होती है, परन्तु नियुक्ति से पूर्व स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश की इच्छा जान ली जाती है, और उस इच्छा के अनुसार ही नियुक्ति की जाती है। गवर्नर-जनरल का कार्यकाल साधारणतया पांच या छः साल होता है। इस कार्यकाल के बीच में उसके वेतन में कमी नहीं की जाती।

आस्ट्रेलिया (की कामनवेल्थ) के छः प्रान्तों में से प्रत्येक के लिए गवर्नर की नियुक्ति भी बादशाह द्वारा होती है। इनकी नियुक्ति बादशाह ब्रिटिश सरकार के परामर्शानुसार करता है।

संधि करने का अधिकार—जब कोई स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश साम्राज्य से बाहर के देश से संधि करना चाहता है तो उसे इस बात का उचित विचार कर लेना चाहिए कि इस का साम्राज्य के अन्य भागों की सरकारों पर क्या प्रभाव पड़ने की सम्भावना है, और

* ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि-स्वरूप, केनेडा और दक्षिण अफ्रीका में हाई-कमिश्नर, और आस्ट्रेलिया में 'रेप्रेजेंटेटिव' रहता है। आयर्लैंड में इस प्रकार का कोई पदाधिकारी नहीं रहता।

जिन सरकारों से उस संधि का सम्बन्ध आता हो; उन्हें उसकी सूचना दे देनी चाहिए, जिससे वे इसके विषय में विचार कर सकें। इस प्रकार की सूचना पानेवाली प्रत्येक सरकार का कर्तव्य है कि वह यथा-सम्भव जल्दी उस संधि के सम्बन्ध में अपना भाव प्रकट करे। जब तक कि संधि का प्रस्ताव करनेवाली सरकार को अन्य सरकारों की विरोधात्मक सूचना न मिले, वह यह मानते हुए अपनी कार्रवाई जारी रख सकती है कि संधि साधारणतया सब को मान्य है। तथापि पूर्व इसके कि दूसरी सरकारों पर किसी प्रकार का बंधन डालने वाली बात की जाय, यह आवश्यक है कि उनकी स्पष्ट सहमति प्राप्त की जाय। यदि पूर्वोक्त सूचना पानेवाली कोई सरकार संधि के विषय में विशेष विचार करना आवश्यक समझे तो वह इस के लिए अपना प्रतिनिधि नियत करदे। ऐसे प्रतिनिधियों से विचार-विनिमय और समझौते के बाद संधि का मसविदा तैयार किया जाता है, और उस पर उक्त प्रदेश का बादशाह द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि हस्ताक्षर करता है। तदनंतर संधि करनेवाले प्रदेश की सरकार अपनी पार्लिमेंट की सलाह से उस पर अपनी स्वीकृति देती है। तब वह संधि अमल में आती है। इस में ब्रिटिश सरकार कोई हस्तक्षेप नहीं करती।

जब कोई स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश दूसरे स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश या प्रदेशों से संधि करना चाहता है, या संधि का विषय ऐसा होता है, जिसका सम्बन्ध साम्राज्य भर से होता है तो साम्राज्य की एकता की भावना रखने का प्रयत्न किया जाता है। साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों तथा इंगलैंड की सरकार उसके विषय में परस्पर में विचार-विनिमय करती हैं। यदि आवश्यक होता है तो सब सरकारों के प्रतिनिधियों की कान्फ्रेंस की जाती हैं। यथेष्ट तर्क-वितर्क के पश्चात् संधि की शर्तें

तय की जाती है। संधि के अन्तिम स्वरूप का निश्चय होजाने पर विविध सरकारों के प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर होते हैं। पश्चात् प्रत्येक सरकार अपनी-अपनी पार्लिमेंट की सलाह से सधि को स्वीकृति देती है।

यदि ब्रिटिश सरकार किसी देश से संधि करती है तो वह सधि साम्राज्य के किसी स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश पर उस समय तक लागू नहीं होती, जब तक कि उस उपनिवेश की सरकार स्वतंत्र रूप से उस पर अपनी स्वीकृति न दे दे।

सन् १९२२ में ब्रिटिश सरकार ने टर्की से लासेन की संधि की। यद्यपि इसके मसविदे के विषय में केनेडा की सरकार को सूचित कर दिया गया था, उसने इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया क्योंकि उसे ऐसी संधि का उत्तरदायित्व लेना पसन्द न था, जिसके करने में उसके प्रतिनिधियों ने भाग नहीं लिया। सन् १९२३ में केनेडा की संयुक्त-राज्य अमरीका से 'हेलिवट फिशरी ट्रीटी' नामक संधि हुई, इसके सम्बन्ध में बातचीत ('नेगोसियेशन') ब्रिटिश सरकार के वाशिंगटन स्थित राजदूत द्वारा हुई थी, और यह कार्य केनेडा-सरकार की इच्छानुसार हुआ था। परन्तु जब यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि केनेडा के मंत्री के साथ ब्रिटिश राजदूत के भी उस पर हस्ताक्षर हों तो केनेडा की सरकार ने आग्रह-पूर्वक कह दिया कि संधि का सम्बन्ध केनेडा को ब्रिटिश प्रजा और केनेडा की सरकार से है, अतः इस पर केवल केनेडा के ही प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर होने चाहिएँ। पीछे यह दृष्टिकोण ब्रिटिश सरकार ने स्वीकार कर लिया। केनेडा की इस संधि सम्बन्धी व्याख्या को संयुक्त-राज्य-अमरीका ने भी मान लिया और संधि नियमित रूप से होगयी। सन् १९२३ की साम्राज्य-परिषद ने स्वाधीन प्रदेशों के संधि करने के अधिकार सम्बन्धी उपर्युक्त प्रकार की कार्रवाई का समर्थन कर दिया।

वैदेशिक नीति—साम्राज्य-परिषद में यह निश्चय हुआ था

कि वैदेशिक नीति का अधिकांश उत्तरदायित्व अभी कुछ समय तक ब्रिटिश सरकार पर रहना चाहिए। परन्तु यह ध्यान रखा जायगा कि ब्रिटिश साम्राज्य का कोई स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश अपनी सरकार की स्वीकृति के बिना, किसी बन्धन को मानने केलिए बाध्य न होगा। दो प्रदेशों ने यह स्पष्ट रूप से कह दिया था कि यद्यपि हमने गत योरपीय महायुद्ध में इंगलैंड की सहायता की है, हम भविष्य में उस समय तक ऐसा कदापि नहीं करेंगे जब जबतक पहले से ही हमारा युद्ध के विषय में परामर्श न ले लिया जायगा, और हम उससे सहमत न हो जायंगे।*

स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश विदेशी राज्यों में अपने स्वतंत्र राजदूत रख सकते हैं। उदाहरणवत केनेडा का अपना राजदूत वाशिंगटन (अमरीका के संयुक्त राज्य) में रहता है।

स्वाराज्य प्राप्त उपनिवेशों की विदेश-नीति सम्बन्धी एक विचारणीय प्रश्न भारतवासियों के वहाँ जाने और बसने का है। प्रायः इन उपनिवेशों में भारतवासियों को जाकर रहने का अधिकार नहीं है। यद्यपि उनका क्षेत्रफल बहुत अधिक है, और वहाँ की उपज से जितनी जनता का निर्वाह हो सकता है, उसकी अपेक्षा वहाँ बहुत कम लोगों की आबादी है। किसी उपनिवेश में तो खुले तौर से, और किसी में सभ्यता या योग्यता के नियम की आड़ में, उन्हें वहाँ प्रवेश करने के अयोग्य ठहराया जाता है। उपनिवेशों में वर्णविद्वेष की भावना प्रचंड है, वे अनगोरों का निवास पसन्द नहीं करते, और जो भारतवासी वहाँ जाकर रहने लग गये है, उन्हें निकालने के लिए विविध उपाय किये जाते हैं। विशेषतया दक्षिण अफ्रीका का यूनियन यह चाहता है कि केवल उन्हीं भारतवासियों को समानता का अधिकार दिया जाय, जो योरपीय सभ्यता को अपनाले; अन्य भारतवासी वहाँ से निकाल दिये जायँ।

* वर्तमान महायुद्ध में आयर्लैंड ने इंगलैण्ड का साथ नहीं दिया, और जर्मनी से युद्ध-घोषणा नहीं की।

साम्राज्य-परिषद दक्षिण अफ्रीका आदि उपनिवेशों पर दबाव डाल कर उनकी नीति भारतवासियों के अनुकूल नहीं बना सकी; हाँ, वह यथा-सम्भव कुछ समझाने-बुझाने का काम करती है। उसका मत है कि जो भारतवासी कानून के अनुसार इन उपनिवेशों में बस गये हैं, उनके नागरिकता का अधिकार को मान्य किया जाय। परन्तु उपनिवेश अपनी जनता में कहाँ तक दूसरे देशों के आदमियों को मिलने दें, इस विषय के नियंत्रण में स्वाधीन हैं।

रक्षा सम्बन्धी नीति—आरम्भ में, साम्राज्य के सभी भागों की रक्षा के लिए ब्रिटिश सरकार अपनी सेनाओं द्वारा प्रबन्ध करती थी। इसमें क्रमशः परिवर्तन हुआ। सन् १९२३ और १९२६ की साम्राज्य-परिषदों में यह निश्चय हुआ कि साम्राज्य के प्रत्येक स्वराज्य-प्राप्त भाग की पार्लिमेंट अपनी-अपनी सरकार की सिफारिश पर यह निश्चय करे कि उसे अपने प्रदेश की रक्षा के लिए क्या-क्या उपाय करने चाहिएँ। अपने यहाँ की आन्तरिक तथा वाह्य रक्षा करने का मुख्य उत्तरदायित्व उस प्रदेश की सरकार पर है। जहाँ तक सम्भव हो, प्रत्येक प्रदेश में जल सेना, स्थल सेना और वायु-सेना की उन्नति इस प्रकार की जाय कि उसकी व्यवस्था, ट्रेनिंग, शस्त्रास्त्र, स्टोर और अन्य सामान एक ही ढङ्ग का हो, जिससे वह अन्य उपनिवेशों की सेना से, आवश्यकता होने पर, शीघ्र ही सहयोग कर सके। साम्राज्य-परिषद रक्षा सम्बन्धी मोटी-मोटी बातों का विचार करती है। इस विषय का पृथक् विचार करने के लिए साम्राज्य-रक्षा-कमेटी है, और ब्यौरेवार बातों को उसकी एक उपसमिति तय करती है जिसका नाम 'ओवरसीज़ डिफेन्स-सब-कमेटी' है।

न्याय सम्बन्धी अपील—प्रिवी कौंसिल के सम्बन्ध में, चौथे परिच्छेद में कहा जा चुका है। उसकी न्याय-उपसमिति

साम्राज्यान्तर्गत भागों के मुकदमों की अन्तिम अपील सुनती है। इसमें स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों तथा भारतवर्ष के भी कुछ न्यायाधीश होते हैं। क्रमशः स्वाधीन उपनिवेश यह अनुभव करने लगे कि इस उपसमिति में अपील भेजने से हमारा बहुत धन खर्च होता है, इस लिए हमें अपने मुकदमों का अन्तिम निर्णय अपने यहाँ ही कर लेना चाहिए। कुछ लोगों का यह भी मत है कि किसी देश के मुकदमों के फैसलों की अपील अन्य देश में होने देना एक अंश तक उसकी अधीनता का सूचक है। सन् १९०० में आस्ट्रेलिया ने अपने शासन-विधान में यह व्यवस्था करली कि वहाँ का हाईकोर्ट ही वैधानिक विषयों में अन्तिम निर्णय किया करे। सन्.१९०९ दक्षिण अफ्रीका ने भी इस दिशा में कदम बढ़ा दिया। सन् १९०७, १९११ और १९१८ की साम्राज्य-परिषदों में प्रिवी कौंसिल की न्याय-उपसमिति के संगठन में ऐसा सुधार करने का विचार हुआ कि लार्ड-सभा और इस उपसमिति को मिलाकर एक 'इम्पीरियल कोर्ट-आफ-अपील' स्थापित की जावे, जिसके कई अंग हों; और, एक अंग समय-समय पर उपनिवेशों में भ्रमण करे। इस योजना का कोई फल नहीं निकला। आयरिश-फ्री-स्टेट ने तो प्रिवी-कौंसिल की उपसमिति से अपना सम्बन्ध ही हटा लिया। अन्य प्रदेशों के भी बहुत कम मुकदमों की अपीलें इस उपसमिति में जाती हैं। ये प्रदेश अपने-अपने शासन विधान में आवश्यक संशोधन करके प्रिवी-कौंसिल से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकते हैं।

निदान साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश अब स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हैं; किसी भाग पर दूसरे भाग का दबाव नहीं है। प्रत्येक भाग अब यह स्वयं निश्चय करता है कि दूसरे भागों से वह कहाँ तक

सहयोग करे। इस प्रकार धीरे धीरे, परन्तु दृढ़ता-पूर्वक ये अपनी स्वतंत्रता बढ़ाते जा रहे हैं।

साम्राज्य से सम्बन्ध--विच्छेद—कुछ वर्षोंसे यह प्रश्न राजनीतिज्ञों के सामने रहा है कि क्या स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश ब्रिटिश साम्राज्य से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकते हैं। ब्रिटिश सरकार इसका निर्णयात्मक उत्तर देने से बचती रही है। सन् १९३० के साम्राज्य-सम्मेलन ने भी इस विषय में कुछ निश्चय नहीं किया। सन् १९३३ में आयरिश फ्री-स्टेट ने ब्रिटिश सरकार से इस बात का स्पष्ट और असंदिग्ध उत्तर चाहा कि यदि आयरिश जनता ब्रिटिश कामनवेल्थ से अपना सम्बन्ध विच्छेद करने का फैसला करे तो क्या वह युद्ध या आक्रमणात्मक कार्रवाई समझी जायगी। ग्रेट ब्रिटेन ने बड़ी चतुराई से कहा कि वह ऐसे प्रश्न का उत्तर देना नहीं चाहता, जो नितान्त कल्पनात्मक है, और इसलिए जब तक वास्तविक संकट उपस्थित न हो, वह यह नहीं बतला सकता कि वैसा होने की दशा में उसका क्या रुख होगा। साधारणतया स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों को जिस राजनैतिक या आर्थिक अधिकार की आवश्यकता प्रतीत होती है, उसके उपयोग में ग्रेट-ब्रिटेन बाधक नहीं होता; और ये प्रदेश साम्राज्य में बने रहने में अपनी कोई हानि नहीं समझते।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

आयर (आयर्लैंड)

नये विधान से राष्ट्रीय एकता और स्वतंत्रता की महत्वाकांक्षा पूरी हो जाती है। यह स्वतंत्र विधान किसी भी देश या देश-समूह के साथ

वैधानिक सम्बन्ध के सिद्धान्त पर नहीं बनाया गया है। पर वास्तव में उसमें अन्य राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण सहयोग रखने के लिए पूर्ण व्यवस्था है। —डी० वेलेरा

ब्रिटिश साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त भागों में 'आयर' (आयर्लैंड) का विशेष स्थान है। उदाहरणार्थ अन्य स्वाधीन उपनिवेशों में बादशाह के प्रति राजभक्ति की शपथ ली जाती है, यहाँ ऐसी कोई बात नहीं; यहाँ से प्रिवी कौंसिल में अपील जाना बन्द कर दिया गया है। और, वर्तमान महायुद्ध में यह एक तटस्थ राज्य बनकर रहा है, इत्यादि। इस परिच्छेद में इस राज्य की शासनपद्धति बतलायी जायगी। पहले इसका कुछ ऐतिहासिक परिचय प्राप्त कर लेना उपयोगी होगा।

ऐतिहासिक परिचय— प्रथम खंड में, उत्तरी आयर्लैंण्ड के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए यह बताया जा चुका है कि सन् १८०१ में आयर्लैंण्ड और ग्रेट-ब्रिटेन की पार्लिमेंट मिला दी गयी थी। परन्तु आयर्लैंड के निवासी, विशेषतया उत्तरी आयर्लैंड को छोड़कर उसके शेष भाग के रहनेवाले अपनी स्वतंत्रता के इच्छुक, तथा उसके लिए प्रयत्नशील बने रहे। ये अंगरेजों से मिलकर एक न हो सके। इसके मुख्य कारण ये थे:—(१) ग्रेट-ब्रिटेन के अधिकांश आदमी प्रोटेस्टेन्ट ईसाई हैं, और आयर्लैंड के हैं रोमन-केथलिक। इन दोनों सम्प्रदायों में पहले बहुत संघर्ष रहा है, और अब भी इनमें एक दूसरे के प्रति यथेष्ट घनिष्टता नहीं है। (२) ग्रेट ब्रिटेन की जनता को जो नागरिकता के अधिकार बहुत समय से प्राप्त हैं, वे आयर्लैंण्ड वालों को थोड़े समय से ही मिले हैं। इससे पूर्व दोनों देशों की जनता में सरकार ने बहुत भेद-भाव रखा है। (३) आयर्लैंड में बहुत-से अंगरेज बसे थे, और वहाँ की भूमि पर अधिकार करके बड़े-बड़े जमींदार बन

गये थे, जब कि आयर्लैंड वाले प्रायः साधारण किसान और मजदूर ही रह गये थे। आयर्लैंड पर अधिकार कर लेने के बाद अंगरेज चाहते थे कि यह देश सदैव ग्रेट-ब्रिटेन के अधीन रहे। इसका एक कारण यह भी था कि अंगरेज़ों का फ्रांस वालों से प्रायः युद्ध होता रहता था, और क्योंकि फ्रांस की अधिकांश जनता रोमन-कैथलिक सम्प्रदाय की थी, इससे अंगरेजों को यह आशंका रहती थी कि फ्रांस से युद्ध होने की दशा में कहीं आयर्लैंड उसका ही साथ न दे दे, और इस प्रकार इंगलैंड पर दक्षिण और पश्चिम दोनों दिशाओं से आक्रमण हो सके।*

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम भाग तक आयर्लैंड में कई सुधार हो गये थे, परन्तु आयर्लैंड की जनता इससे संतुष्ट नहीं थी। वे स्व-राज्य अर्थात् 'होम-रूल' चाहते थे।† वे अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म की विभिन्नता के कारण अंगरेजों से पृथक् जातीयता का अनुभव करते थे। क्रमशः होमरूल आन्दोलन बढ़ता गया। ब्रिटिश पार्लिमेंट के आयरिश सदस्यों ने पार्लिमेंट में भरसक प्रयत्न किया; उधर आयर्लैंड में आयरिश भाषा की उन्नति, स्वदेशी वस्तु-प्रचार, अंगरेजी माल का बहिष्कार और लगान-बन्दी आदि के आन्दोलन खूब जोर से हुए। फलत; ब्रिटिश पार्लिमेंट में आयरिश होमरूल बिल अर्थात् आय-लैंन्ड के स्वराज्य का मसविदा उपस्थित किया गया। परन्तु वह स्वी-कृत नहीं हुआ। कुछ समय बाद दूसरी वार भी वैसा मसविदा रद्द हो जाने पर आयर्लैंड निवासी स्वतंत्रता के लिए तीव्र आन्दोलन करने

---

*जब से जरमनी शक्तिशाली हुआ है, फ्रांस और इंगलैन्ड की शत्रुता हट गया है।

†श्रीमति ऐनी बीसेंट आयरिश महिला थी। उनके नेतृत्व में भारतवर्ष में जो स्वराज्य-आन्दोलन हुआ, वह होमरूल आन्दोलन कहलाया।

लगे। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में 'सिनफीन' आन्दोलन आरम्भ हुआ। इस दल के आदमियों ने बड़े-बड़े कष्ट सहकर भी स्वराज्य का प्रयत्न जारी रखा।

स्मरण रहे कि इस स्वराज्य-आन्दोलन में उत्तरी आयलैंड का सहयोग नहीं हुआ। यहाँ की जनता अधिकतर अंगरेज है। ये अंगरेज आयलैंड को स्वराज्य दिये जाने के विरोधी रहे हैं। इनका कथन यह रहा है कि आयलैंड में आयरिश लोग बहुसंख्यक है, और यहाँ स्वराज्य हो जाने पर वे हमारे साथ ज्यादती या अन्याय करेंगे। इसलिए या तो आयलैंड को स्वराज्य दिया ही न जाय, और अगर दिया जाय तो उत्तरी आयर्लैंड को, जिसमें अधिकांश अलसटर प्रान्त है, उससे पृथक् शासन अधिकार रहे।*

सन् १९१४ में आयलैंड के शासन का नया कानून पास हुआ। परन्तु महायुद्ध के कारण वह अमल में नहीं आया। राष्ट्रीय नेताओं ने ब्रिटिश सरकार से संधि करके अपने स्वराज्य-आन्दोलन को युद्ध-काल तक के लिए स्थगित कर दिया था, परन्तु जनता स्वातंत्र्य-संग्राम को चलाती रही। सन् १९१६ में ब्रिटिश शासन का खुलकर विरोध किया गया और आयलैंड को प्रजातंत्र घोषित कर दिया गया। ग्रेट-ब्रिटेन और आयलैंड में सन् १९१९ में सशस्त्र संघर्ष हुआ, जो सन् १९२१ तक जारी रहा। आयरिश जनता द्वारा निर्वाचित 'डेल' (आयरिश पार्लिमेंट) ने जनवरी १९१९ में आयलैंड की स्वतंत्रता की पुनः घोषणा की। सन् १९२० में ब्रिटिश पार्लिमेंट ने कानून पास

*भारतवर्ष में देशी राज्यों को प्रायः 'अलसटर' की उपमा दी जाया करती है, कारण जब कि कांग्रेस न केवल भारतवर्ष के केन्द्रीय शासन में उत्तरदायित्व, वरन् ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्ध-विच्छेद तक का आन्दोलन करती है, देशी नरेश सम्राट् (इङ्गलैंड के बादशाह) से सीधा सम्बन्ध बनाये रखने की बात करते हैं।

करके उत्तरी आयर्लैंड और दक्षिण आयर्लैंड के लिए अलग-अलग पार्लिमेंट की व्यवस्था की। उत्तरी आयर्लैंड ने इसे स्वीकार कर १९२१ में पार्लिमेंट का निर्वाचन किया, परन्तु (दक्षिण) आयर्लैंड तो पहले से ही प्रजातंत्र की घोषणा कर चुका था, उसने सन् १९२१ई० की संधि से आयरिश फ्री स्टेट की स्थापना की। इस विषय का कानून १९२२ से अमल में आया। इस से आयर्लैंड में दो पार्लिमेंट होगयीं। उत्तरी आयर्लैंड की पार्लिमेंट तो ब्रिटिश पार्लिमेंटके ही अधीन रही। शेष आयर्लैंड,आयरिश फ्री स्टेट के नाम से, एक पृथक् राज्य होगया; इसका और ब्रिटिश संयुक्त राज्य का शासन-प्रबन्ध पृथक्-पृथक् होने लग गया। इसकी, डबलिन शहर में, स्वतंत्र पार्लिमेंट होने लगी, जिसे 'डेल' कहते हैं। आयरिश फ्री स्टेट की शासनपद्धति की रचना स्वयं इस राज्य के निवासियों ने, अपने लिए की थी और ब्रिटिश पार्लिमेन्ट ने उसे स्वीकार कर लिया था।

सन् १९२२ ई० का कानून जिस संधि के अनुसार बनाया गया था, उसके सम्बन्ध में आयरिश नेताओं में मतभेद रहा। प्रजातन्त्रवादी लोगों ने संधि से असंतोष प्रकट किया और आयर्लैंड के विभाजन को अस्वीकार करके इसे एक अखंड और स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित किया। डी० वेलेरा को प्रेसीडेन्ट तथा विदेश-मंत्री के पद पर नियुक्त किया गया। कुछ समय तक ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध घोर युद्ध रहा। तथापि दस वर्ष तक संधि के समर्थक दल का ही बहुमत रहा। सन् १९३२ के चुनाव में डी० वेलेरा के दल की विजय हुई।

डी० वेलेरा बादशाह के प्रति राजभक्ति की शपथ लेने के विरुद्ध थे। उन्होंने शीघ्र ही इस शपथ की प्रथा उठा देने का प्रस्ताव 'डेल' (प्रतिनिधि-सभा) में पास करा लिया। सिनेट ने उसे

पास न किया। पश्चात् १८ महीने की आवश्यक अवधि बीत जाने पर वह पुनः 'डेल' में पेश किया गया। इस सभा में इस बार भी वह बहुमत से स्वीकृत हुआ। सिनेट द्वारा अस्वीकृत हो जाने पर भी अब वह नियमानुसार कानून बन गया है। दूसरा काम डी० वेलेरा ने यह किया कि इंगलैन्ड की भूमि-कर सम्बन्धी रकम देना बन्द कर दिया। पहले कहा जा चुका है कि आयर्लैंड में प्रायः सारी जमीन अंगरेज ज़मींदारों के अधिकार में थी। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटिश सरकार ने उनसे कुल जमीन खरीद कर किसानों में बांट दी थी। ज़मींदारों को दी गयी रकम के सम्बन्ध में आयर्लैंड के किसानों से भू-कर वसूल किया जाता था। यद्यपि भूमि उत्तरी आयर्लैंड के किसानों को भी दी गयी थी, उनसे यह कर नहीं लिया जाता था। फिर, इस मद में आयर्लैंड ब्रिटेन को काफी रकम दे चुका था, और अब आर्थिक संकट के समय यह रकम देना आयर्लैंड वालों के लिए सम्भव न था। डी० वेलेरा इस मामले को एक निस्पक्ष अन्तर्राष्ट्रीय पंचायत के सामने रखने को तैयार थे, परन्तु ब्रिटेन को यह मान्य न हुआ कि साम्राज्य के बाहर का व्यक्ति ऐसे निर्णय में भाग ले। उसने उक्त रकम वसूल करने के लिए आयरिश माल पर कर लगाया तो इसके जवाब में डी० वेलेरा ने ब्रिटिश माल पर कर लगा दिया।* आयरिश-फ्री स्टेट से 'यूनियन जेक' नामक अंगरेजी झंडा हटा दिया गया, यहाँ अब स्वतंत्र आयरिश पताका फहराने लगी। डी० वेलेरा की स्पष्ट नीति यह रही कि शासन-विधान की उन सब धाराओं में संशोधन या परिवर्तन कर दिया जाय जो एक राष्ट्र के पूर्ण प्रभुत्व के अधिकार के

*इससे आयर्लैण्ड को अपने उद्योग-धंधों के विषय मे स्वावलम्बी होने के लिए अच्छा प्रोत्साहन मिला।

विरुध हों। निदान, सन् १९३६ के अन्त में, शासन विधान मूल मसविदे से काफी बदल गया। अन्ततः १९३७ में जनता के मतानुसार नया विधान बनाया गया। इसके अनुसार इस राज्य का नाम 'आयरिश फ्री स्टेट' हटा कर पुराना नाम 'आयर' (आयर्लैंड) रखा गया। यद्यपि उत्तरी आयर्लैंड अभी इसमें शामिल नहीं है, पर डी० वेलेरा ने आयर्लैंड की अखंडता का दावा करते हुए इस विधान में उसके लिए द्वार खुला रखा है।

सन् १९३७ का विधान—इस विधान की प्रस्तावना की भाषा बहुत मार्मिक और हृदयग्राही है। इसी में प्रभु ईसा मसीह के प्रति अधीनता, सूचित की गयी है, जिसने आयरिश जनता के पूर्वजों की, कठिन परीक्षा की शताब्दियों में, रक्षा की। राष्ट्र की न्यायोचित स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए पूर्वजों के वीरतापूर्ण संघर्ष को याद किया गया है। विधान का लक्ष्य यह बताया गया है कि सार्वजनिक हित की उन्नति हो, व्यक्तियों के सम्मान और स्वतंत्रता का आश्वासन रहे, सच्ची सामाजिक व्यवस्था प्राप्त हो, देश में एकता हो, और अन्य राष्ट्रों से मेल-जोल रहे।

विधान में कहा गया है कि आयर्लैंड एक प्रभुताप्राप्त, स्वतंत्र और प्रजासत्तात्मक राज्य है। आयरिश राष्ट्र का यह चिरस्थायी, अलोपनीय और प्रभुतायुक्त अधिकार है कि स्वयं अपनी शासनपद्धति पसन्द करे, राष्ट्रों के साथ अपने सम्बन्ध निश्चित करे और अपने राजनैतिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन का अपनी प्रतिभा और परम्पराओं के अनुसार, विकास करे। राष्ट्रीय झंडा तिरंगा है, उसमें हरा, सफेद और नारंगी रंग होता है। सरकारी कामकाज की प्रमुख भाषा आयरिश है; हाँ, अंगरेजी भी मान्य करली गयी है।

प्रेसीडेन्ट—प्रेसीडेन्ट (राष्ट्रपति) निर्वाचकों के प्रत्यक्ष मत द्वारा चुना जाता है। उसका कार्यकाल सात वर्ष का होता है, परन्तु उसका दूसरी बार भी निर्वाचन हो सकता है। इस पद पर वही व्यक्ति निर्वाचित हो सकता है, जो ३५ वर्ष या अधिक आयु वाला हो। अपना पद ग्रहण करते समय वह इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि मैं शासन-विधान की रक्षा करूंगा, इसके नियमों के अनुसार अपने कर्तव्य का पालन करूंगा और अपनी योग्यता को आयरिश जनता के हित और सेवा में अर्पित करूँगा।

प्रेसिडेंट 'डेल' (आयरिश प्रतिनिधि-सभा) द्वारा नामजद व्यक्ति को 'टोईसीच' या प्रधान मंत्री नियुक्त करता है, और प्रधानमंत्री द्वारा नामजद व्यक्तियों को, पार्लिमेंट की पूर्व स्वीकृति से, अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करता है। वह प्रधान मंत्री की सिफारिश पर पार्लिमेंट का अधिवेशन करता है, तथा उसे भंग करता है। वह सेना सम्बन्धी सर्वोच्च अधिकारी है। वह किसी कानूनी मसविदे को सुप्रीम कोर्ट के पास यह निर्णय करने के लिए भेज सकता है कि वह मसविदा विधान से असंगत तो नहीं है। वह डेल के बहुसंख्यक तथा सिनेट के कम-से-कम एक-तिहाई सदस्यों के संयुक्त निर्देश से किसी कानूनी मसविदे पर जनमत ले सकता है। प्रेसीडेन्ट को उसके कार्य-सम्पादन के सम्बन्ध में परामर्श देने के लिए एक संस्था 'कौंसिल-आफ स्टेट' या राजपरिषद होती है।

राजपरिषद के सदस्यों में से प्रधानमंत्री, सहायक प्रधानमंत्री, चीफ-जस्टिस, हाईकोर्ट का अध्यक्ष, 'डेल' का सभापति, सिनेट का सभापति, और अटार्नीजनरल अपने पद के कारण सदस्य होते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य व्यक्ति भी इसके सदस्य होते हैं; ये व्यक्ति नये प्रेसीडेन्ट के पद ग्रहण करने तक सदस्य रहते हैं।

प्रबन्धकारिणी सभा—राज्य की प्रबन्धकारिणी सभा या सरकार में कम-से-कम ७ और अधिक-से-अधिक १५ सदस्य (मंत्री) होते हैं। इनकी नियुक्ति, प्रेसीडेंट द्वारा होती है; इसके सम्बन्ध में पहले कहा जा चुका है। सरकार का प्रमुख अधिकारी प्रधान मंत्री होता है।। सरकार 'डेल' के प्रति सामूहिक रूप से उत्तर-दायी होती है, और उसकी सहमति बिना किसी युद्ध में भाग नहीं ले सकती। प्रधान मंत्री प्रेसीडेंट को स्वदेश तथा विदेश नीति सम्बन्धी सब बातोंकी सूचना देता है। वह एक मंत्रीको अपना सहायक नामजद करता है। ये दोनों अधिकारी तथा राजस्व-मंत्री 'डेल' के सभासदों में से होते हैं। अन्य मंत्री 'डेल' या 'सिनेट' किसी के भी सदस्यों में से हो सकते हैं, परन्तु सिनेट के सदस्यों में से दो से अधिक मंत्री नहीं हो सकते। प्रत्येक मंत्री पार्लिमेंट की दोनों सभाओं में से चाहे जिसमें उपस्थित होसकता है, और भाषण दे सकता हैं। प्रधान मंत्री, प्रेसीडेंट के हाथ में त्यागपत्र देकर अपने पद को छोड़ सकता है। जब 'डेल' के सदस्यों का बहुमत उसे समर्थन करने वाला न हो तो उसे त्यागपत्र देदेना होता है; हाँ, यह बात उस दशा में नहीं होती, जब उसके परामर्श के अनुसार प्रेसीडेन्ट 'डेल' को भंग करदे और नये चुनाव में 'डेल' का बहुमत प्रधान मंत्री का समर्थन करने वाला हो। प्रधान मंत्री के त्यागपत्र देने की दशा में, अन्य मन्त्रियों का भी त्यागपत्र दिया जाना समझा जाता है। प्रधान मन्त्री को छोड़कर, अन्य मन्त्री अपना त्यागपत्र प्रधान मन्त्री द्वारा (प्रेसीडेन्ट को) देते हैं। मंत्रियों को कानून के अनुसार निर्धारित वेतन मिला है।

सरकार को कानूनी विषयों में सलाह देने के लिए अटार्नी-जनरल रहता है। उसकी नियुक्ति, प्रधान मन्त्री द्वारा नामजदगी होजाने पर,

प्रेसीडेन्ट द्वारा की जाती है। उसे निर्धारित वेतन मिलता है। प्रधान मन्त्री के त्यागपत्र देदेने की दशा में उसे भी अपने पद से अवकाश ग्रहण करना पड़ता है।

पार्लिमेंट—आयरिश पार्लिमेंट में प्रेसीडेन्ट के अतिरिक्त दो सभाएँ होती हैं:—डेल या प्रतिनिधि-सभा (हाउस-आफ-रेप्रेजेंटेटिव्स) और सिनेट। डेल का नया निर्वाचन प्रायः सात वर्ष में होता है। डेल में १३८ सदस्य होते हैं, प्रत्येक बालिग स्त्री और पुरुष को मताधिकार है। सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्व और एकाकी हस्तांतर-योग्य मत-पद्धति के आधार पर चुने जाते हैं।* सिनेट में ६० सदस्य होते हैं; इनमें से ११ सदस्य प्रधानमंत्री द्वारा नामजद होते हैं, ६ सदस्य विश्वविद्यालयों द्वारा निर्वाचित होते हैं, और शेष ४३ निम्नलिखित पांच हितों या धंधों के उम्मेदवारों में से चुने जाते हैं :— (१) शिक्षा, साहित्य, भाषा, कला, संस्कृति आदि, (२) कृषि और मछली पकड़ना, (३) श्रम, (४) उद्योग और वाणिज्य, (५) शासन और समाज-सेवा। सिनेट का नया निर्वाचन 'डेल' के भंग होने के ९० दिन के भीतर किया जाता है।

कानून बनानेका अधिकार एकमात्र आयरिश पार्लिमेंट को है; हाँ इसके अधीन अन्य कानून बनानेवाली संस्थाओं की व्यवस्था की जासकती है। आयरिश पार्लिमेंट कोई ऐसा कानून नहीं बनायेगी, जो इस विधान से असंगत हो। पार्लिमेंट की दोनों सभाएँ अपने-अपने सदस्यों में से सभापति और उपसभापति का चुनाव करती हैं, उनके अधिकार और कर्तव्य निर्धारित करती है। इन पदाधिकारियों को मिलनेवाला भत्ता

*कम से कम बीस हजार, और अधिक से अधिक तीस हजार, व्यक्तियों की ओर से एक प्रतिनिधि लिया जाता है।

आदि कानून द्वारा निर्धारित किया जाता है। पार्लिमेंट की प्रत्येक सभा अपनी कार्य-पद्धति आदि के स्थायी नियम बनाती है और अपने सदस्यों का वेतन आदि निश्चित करती है। कोई व्यक्ति एक ही समय में दोनों सभाओं का सदस्य नहीं हो सकता; यदि एक सभाका कोई सदस्य दूसरी सभा का सदस्य बन जाता है, तो उसे प्रथम सभा की सदस्यता से अस्तीफा देना पड़ता है।

कानून कैसे बनते हैं?——प्रत्येक सार्वजनिक कानून का मसविदा 'डेल' में स्वीकृत हो जाने पर सिनेट में भेजा जाता है, और (अगर वह धन सम्बन्धी नहीं होता तो) सिनेट उस पर संशोधन कर सकती है। 'डेल' उन संशोधनों पर विचार करती है। सिनेट द्वारा पास किया हुआ सार्वजनिक कानूनी मसविदा 'डेल' में उपस्थित किया जाता है। जब मसविदे को एक सभा पास करदे, और दूसरी उसे स्वीकार करले तो वह दोनों सभाओं द्वारा पास हुआ समझा जाता है।

किसी मसविदे के विचार या संशोधन के लिए सिनेट को अधिक-से-अधिक नब्बे दिन का समय दिया जाता है। यदि सिनेट इतने समय में मसविदे को रद्द को करदे, या उसमें ऐसे संशोधन करदे जिन्हें 'डेल' स्वीकार न करे, तो यदि डेल चाहे तो वह मसविदा १८० दिन बाद दोनों सभाओं द्वारा पास हुआ समझा जाता है। इस प्रकार सिनेट अधिक-से-अधिक २७० दिन तक किसी कानून के बनाने की कार्रवाई कोरोक सकती है।

दोनों सभाओं द्वारा पास होने पर मसविदा प्रधान मंत्री द्वारा प्रेसीडेंट के हस्ताक्षर के लिए उपस्थित किया जाता है, और उसके हस्ताक्षर होने पर वह कानून बन जाता है, और अमल में आता है।

धन सम्बन्धी (कर लगाने या ऋण लेने आदि) कानूनी मसविदे का विचार 'डेल' में ही आरम्भ होसकता है, सिनेट में नहीं। 'डेल' में पास होजाने पर वह मसविदा सिनेट में जाता है, और वहाँ यदि कोई संशोधन हो तो उसके सहित, अथवा बिना संशोधन इक्कीस दिन के भीतर 'डेल' में वापिस आजाता है। यदि इक्कीस दिन के भीतर वह वापिस न आये, या ऐसे संशोधनों सहित आये जिन्हें 'डेल' स्वीकार न करे, तो वह दोनों सभाओं द्वारा पास हुआ समझा जाता है।

न्यायालय—आयर्लैंड की सर्वोच्च अदालत 'सुप्रीम कोर्ट' है; उसमें चीफ-जस्टिस तथा चार अन्य जज होते हैं। उसमें हाईकोर्ट के प्रत्येक फैसले की अपील होसकती है, और उसका निर्णय अन्तिम होता है।* हाईकोर्ट में एक प्रेसीडेन्ट (अध्यक्ष) तथा पांच साधारण जज होते हैं। उसमें सब प्रकार के मामलों फैसला होसकता है, चाहे वह दीवानी हो या फौजदारी। उसे यह निर्णय करने का भी अधिकार है कि कोई कानून वैध है या नहीं। प्रत्येक जज को अपना कार्य आरम्भ करने से पूर्व निर्धारित प्रकार की शपथ लेनी होती है। सुप्रीम कोर्ट तथा अन्य कोर्टों के लिए जजों की नियुक्ति प्रेसीडेंट (राष्ट्रपति) द्वारा की जाती है, और वे अपना कार्य सम्पादन करने के लिए सर्वथा स्वतंत्र है; वे केवल शासन-विधान और कानून के अधीन होते हैं। कोई जज अपने पद से केवल दुराचार या अयोग्यता के कारण ही पृथक् किया जा सकता है, और तब भी यह आवश्यक है कि पार्लिमेंट को दोनों सभाएँ उसे पृथक् करने का प्रस्ताव पास करें। जब ऐसा प्रस्ताव पास होजाता है तो प्रधान मंत्री उसे राष्ट्रपति के पास भेजता है, और राष्ट्रपति उक्त जज को पृथक् करता है। सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट के अतिरिक्त विविध क्षेत्र वाली अन्य बहुत-सी अदालतें हैं।

*आयर्लैंड के किसी फैसले की अपील अब इङ्गलैण्ड की प्रिवी-कौंसिल में नहीं होती।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध—आयर्लैंड का आदर्श ऐसी शान्ति, और मित्रता-पूर्ण सहयोग है, जिसका आधार अन्तर्राष्ट्रीय न्याय और सदाचार हो। यह राज्य अन्य राज्यों से व्यवहार करने में अन्तर्राष्ट्रीय कानून के उन सिद्धान्तों को स्वीकार करता है, जो साधारणतया मान्य होते हैं। विदेश-नीति सम्बन्धी व्यवहार सरकार द्वारा किया जाता है, और वह इसके लिए कानून द्वारा निर्धारित पद्धति या संस्थाओं का उपयोग करती है। सरकार द्वारा किये हुए सुलहनामे ('एग्रीमेंट') 'डेल' के सामने उपस्थित किये जाते हैं। जिस सुलहनामे के अनुसार राज्य को कुछ खर्च करना आवश्यक हो, उसका बन्धन राज्य पर उसी दशा में होगा, जब कि डेल उसकी शर्तों को स्वीकार करले। किसी अन्तर्राष्ट्रीय सुलहनामे का वही स्वरूप राज्य को मान्य होगा, जो आयरिश पार्लिमेंट की दोनों सभाएँ निश्चित करें।

नागरिकों के मूल अधिकार—इस राज्य की शासन-पद्धति की एक बड़ी विशेषता यह है कि यहाँ शासन-विधान में ही नागरिकों के मूल अधिकारों का समावेश है। मुख्य-मुख्य मूल अधिकार निम्नलिखित हैं:—

(क) समस्त नागरिक (पुरुष हों या स्त्रियाँ) कानून के सामने समान हैं।

(ख) राज्य अपने कानूनों द्वारा नागरिकों के वैयक्तिक अधिकारों की रक्षा करने का जिम्मा लेता है।

(ग) राज्य प्रत्येक नागरिक की जान, माल और कीर्ति सम्बन्धी अधिकारों की, अनुचित आक्रमण से, रक्षा करेगा।

(घ) राज्य द्वारा नागरिकों को कुलीनता ('नोबिलिटी')

सम्बन्धी उपाधि नहीं दी जायगी ।

(च) ऐसी शिकायत मिलने पर कि कोई व्यक्ति कानून के विरुद्ध बन्दी (कैदी) बना कर रखा गया है, हाईकोर्ट तथा प्रत्येक जज इस विषय की जाँच करेगा, और उचित समझने पर उसे मुक्त किये जाने की आज्ञा देगा ।

(छ) किसी नागरिक के रहने के स्थान में कोई व्यक्ति उसकी सम्मति या अनुमति बिना, कानून के अनुसार ही घुस सकता है ।

(ज) प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रता होगी । किसी धर्म का पक्षपात नहीं किया जायगा । राज्य केथलिक धर्म की विशेष स्थिति को मान्य करता है, जिसके अनुयायी यहाँ के बहुसंख्यक नागरिक हैं ।

(झ) प्रत्येक व्यक्ति को भाषण तथा लेखन सम्बन्धी स्वतंत्रता होगी; और, सबको बिना शस्त्रों के एकत्र होने का अधिकार होगा ।

(ट) प्रारम्भिक शिक्षा निश्शुल्क होगी । राज्य शिक्षा सम्बन्धी अन्य सुविधाओं और संस्थाओं की व्यवस्था करेगा ।

(ठ) राज्य की प्राकृतिक सम्पत्ति विदेशियों को नहीं दी जायगी ।

(ड) राज्य नागरिकों के पारिवारिक संगठन और सत्ता की रक्षा का जिम्मा लेता है ।

(ढ) राज्य इस बात का प्रयत्न करेगा कि माताएँ अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के कारण ऐसा श्रम करने को बाध्य न हों, जिससे वे अपने घर सम्बन्धी कर्तव्य पालन न कर सकें ।

(त) राज्य विवाह प्रथा की रक्षा करने की प्रतिज्ञा करता है; विवाह-विच्छेद (तलाक) सम्बन्धी कोई कानून नहीं बनाया जायगा ।

(थ) ऐसा कोई कानून नहीं बनाया जायगा, जिससे लोगों को

उनकी निजी जायदाद पर अधिकार न रहे, या सम्पत्ति को हस्तान्तर करने या वसीयत करने आदि में बाधा हो।

समाज-नीति सम्बन्धी सिद्धान्त—पार्लिमेंट के पथ-प्रदर्शन के लिए विधान में समाज-नीति सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त दिये गये हैं। उनका उद्देश्य यह है कि राज्य में सम्पत्ति का वितरण और साख की व्यवस्था इस प्रकार हो कि उससे सर्वसाधारण जनता का हित हो, भूमि पर निर्वाह करनेवाले परिवारों की सुरक्षा हो, और प्रत्येक नागरिक को अपनी यथेष्ट आजीविका की प्राप्ति का अधिकार हो। राज्य इस बात का जिम्मा लेता है कि अशक्त, बालक, विधवा, अनाथ और बूढ़ों की आवश्यकतानुसार सहायता की जाय; वह इस बात का प्रयत्न करेगा कि नागरिकों को आर्थिक आवश्यकता वश कोई ऐसा पेशा करने के लिए बाध्य न होना पड़े जो स्त्रियों (या पुरुषों) के करने योग्य न हो, अथवा उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हो।

विधान में संशोधन कैसे हो?—यदि शासन-विधान में कोई संशोधन (अथवा परिवर्तन या परिवर्द्धन) करना अभीष्ट हो तो, इस विषय का प्रस्ताव 'डेल' में होगा, और जब वह प्रस्ताव पार्लिमेंट की दोनों सभाओं में पास होजायगा, या कानून के अनुसार पास समझा जायगा तो जनता का निर्णय जानने के लिए उस पर निर्वाचकों का मत लिया जायगा। यदि निर्वाचकों का बहुमत उस संशोधन के पक्ष में होगा तो वह संशोधन जनता द्वारा मान्य समझा जायगा। तदनन्तर उस पर प्रेसीडेंट के हस्ताक्षर होजाने के बाद वह अमल में लाया जायगा।

प्रथम प्रेसिडेंट के पद ग्रहण करने से तीन साल तक तो विधान

में संशोधन या परिवर्तन साधारण पद्धति से, पार्लमेंट की दोनों सभाओं की स्वीकृति से, होसकता था। इस समय के बाद होने वाले संशोधनों के लिए ऊपर बतायी हुई व्यवस्था है।

सोलहवाँ परिच्छेद

स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेश

[(क) केनेडा, (ख) दक्षिण अफ्रीका का यूनियन, (ग) आस्ट्रेलिया, (घ) न्यूजीलैंड और, (च) न्यूफाउंडलैंड]

जो शासनपद्धतियाँ समृद्धि और सौहार्द बढ़ाती हैं, और जो हमारे साम्राज्य के अधीन राज्यों के लिए स्थायी रही हैं, प्रायः वही शासन-पद्धतियाँ हैं जिनकी रचना स्वयं उन लोगों ने की, जिन्हें उनके अनुसार रहना था।

—सर जान साइमन

अङ्गरेजों के उपनिवेश संसार के भिन्न-भिन्न भागों में हैं। सब उपनिवेशों में से केवल पाँच स्वराज्य-प्राप्त हैं:—केनेडा, दक्षिण अफ्रीका का यूनियन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, और न्यूफाउन्डलैंड। इन उपनिवेशों का कुल क्षेत्रफल लगभग ७५ लाख वर्ग मील, अर्थात् समस्त ब्रिटिश साम्राज्य के आधे से अधिक है। हम इन उपनिवेशों में से एक-एक की शासनपद्धति का वर्णन करते हैं।

स्मरण रहे कि इन उपनिवेशों की शासनपद्धति कुछ उसी ढंग की है, जैसी ग्रेट-ब्रिटेन की, और क्योंकि उसका विचार इस पुस्तक के प्रथम खंड में विस्तार पूर्वक किया जा चुका है, इन उपनिवेशों के सम्बन्ध में, संक्षेप में ही लिखा जाता है। इन उपनिवेशों का ब्रिटिश सरकार से जो सम्बन्ध है, वह चौदहवें परिच्छेद में ब्योरेवार बताया गया है, अतः यहाँ उसके दोहराने की आवश्यकता नहीं।

(क)

केनेडा

यह उपनिवेश उत्तरी अमरीका का उत्तरी भाग है। यहाँ की गोरी जनता उन लोगों की है, जो सतरहवीं शताब्दी में योरप के 'धार्मिक' अत्यचारों के कारण यहाँ आये थे। इस उपनिवेश के भिन्न-भिन्न भागों में अंगरेज समय-समय पर आकर बसे; कुछ भाग युद्ध या संधि से भी ब्रिटिश साम्राज्य में आये हैं। इस उपनिवेश का कुल क्षेत्रफल पैंतीस लाख वर्गमील है। यहाँ की जनसंख्या सन् १६३१ की गणना के अनुसार एक करोड़ चार लाख थी।

ऐतिहासिक परिचय—योरपीय जातियों में सबसे पहले यहाँ आकर बसने वाले फ्रांसीसी थे। अंगरेज़ यहाँ बहुत पीछे, सन् १७१३ ई० से आने लगे। उस वर्ष फ्रांस और इंगलैंड की एक लम्बी लड़ाई ख़तम हुई, और, फ्रांस ने अंगरेज़ों को केनेडा का कुछ भूमि तथा न्यूफाउन्डलैण्ड प्रदान किया। केनेडा का कुछ और भाग इगलैंड को, फ्रांस से, एक दूसरी लड़ाई की सुलह होने पर, मिला।

केनेडा के उत्तर में अंगरेज़ों का बल अधिक था, और दक्षिण भाग में फ्रांसीसियों की संख्या विशेष थी। ये औपनिवेशिक आपस में लड़ते रहते थे। इसलिए ब्रिटिश सरकार ने सन् १८३९ में लार्ड डरहम को यहाँ भेजा कि वह जाँच करके बतलावें कि इन दोनों भागों का पारस्परिक मनोमालिन्य किस प्रकार दूर हो। लार्ड डरहम की रिपोर्ट केनेडा के राजनैतिक इतिहास में बड़े महत्व की है। केनेडा में उस समय जातिगत विद्वेष बहुत अधिक था, अंगरेज और फ्रांसीसी बात-बात में आपस में लड़ते झगड़ते थे; अविद्यांधकार छाया हुआ था; केनेडा वाले उस समय अपने देश की रक्षा करने में भी असमर्थ थे। यह सब होते हुए भी, लार्ड डरहम ने अपनी रिपोर्ट में उदारता और दूरदर्शिता-

पूर्वक, जोरदार शब्दों में यह सिफ़ारिश की कि केनेडा को उत्तरदायी शासन दिया जाय; उसके दोनों भागों को मिलाकर उनका शासन केनेडा की पार्लिमेंट के अधीन कर दिया जाय। इंगलैंड के कुछ राजनीतिज्ञ इससे सहमत न थे, वे दमन-नीति के पक्ष में थे, सब असंतोष और विद्रोह का, उनकी दृष्टि से एक ही उपाय था, दमन और बल-प्रदर्शन द्वारा शिक्षा देना। परन्तु केनेडा के, और स्वयं इंगलैंड के, सौभाग्य से उनकी कुछ न चली; और ब्रिटिश सरकार ने लार्ड डरहम की रिपोर्ट स्वीकार कर ली।

शासनपद्धति—सन् १८६७ ई० में ब्रिटिश पार्लिमेंट में, 'ब्रिटिश उत्तरी अमरीका कानून' पास होगया। इसमें उन प्रस्तावों को कानूनी रूप दिया गया, जो क्यूबेक (केनेडा) में सुदीर्घ वादविवाद और अन्ततः समझौते के फल-स्वरूप, स्वय केनेडा वालों ने किये थे। पहले पुराना केनेडा (आन्टेरिया और क्यूबेक), नोवास्कोशिया तथा न्यूब्रंजविक एक राज्य में मिले। पश्चात् सन् १८७१ ई० में ब्रिटिश कोलम्बिया भी इसी संघ में सम्मिलित होगया। न्यूफाउन्डलैंड इस संघ में सम्मिलित नहीं हुआ। केनेडा की शासनपद्धति १८६७ के उक्त कानून के अनुसार है, जिसमें पीछे समय-समय पर आवश्यक संशोधन हुए हैं। ये संशोधन केनेडा की सरकार की इच्छानुसार ब्रिटिश पार्लिमेंट ने किये हैं। केनेडा का विधान सिद्धान्त से संघात्मक*, कठिनाई से से बदलने वाला, और लिखित है। इन बातों में यह अपने निकटवर्ती संयुक्त राज्य अमरीका की शासनपद्धति से मिलती है; इंगलैण्ड से नहीं। परन्तु व्यवहार में केनेडा की शासनपद्धति ब्रिटिश शासनपद्धति की ही नकल है।

* संघात्मक शासनपद्धति के लक्षण इस परिच्छेद के अन्त में बताये गये हैं।

संघ-पार्लिमेंट—केनेडा की पार्लिमेंट की दो सभाएँ हैं:—(१) सिनेट और (२) 'कामन'-सभा। सिनेट में ९६ सदस्य होते हैं। ये केनेडा की सरकार की सिफ़ारिश पर, इगलैंड के बादशाह की ओर से, केनेडा के गवर्नर-जनरल द्वारा जन्म भर के लिए नामजद किये जाते हैं; इसमें शर्त यह होती है कि उनकी आयु ३० वर्ष से अधिक की हो, वे विदेशी न हों, और उनमें से प्रत्येक के पास चार हजार डालर अर्थात् लगभग बारह हजार रुपये की जायदाद हो। 'स्पीकर' (अध्यक्ष) सहित १५ सदस्यों का 'कोरम' होता है।

केनेडा के भिन्न-भिन्न भागों से लिये जाने वाले सदस्यों की संख्या कानून से निर्धारित है। गवर्नर-जनरल को सिफारिश से चार भागों का एक-एक या दो-दो सदस्य और लिये जा सकते हैं। इस प्रकार सदस्यों में आठ तक वृद्धि हो सकती है। सिनेट के कुल सदस्यों की संख्या १०४ से अधिक नहीं हो सकती।

'कामन'-सभा की आयु प्रायः पांच वर्ष की होती है। यह जनता की चुनी हुई होती है, इसके सदस्यों के चुनाव के लिए प्रत्येक बालिग स्त्री-पुरुष को मत देने का अधिकार है। इसके सदस्यों में से ६५ क्यूबेक प्रान्त के होते हैं। यह संख्या १९३१ की मनुष्य गणना के आधार पर ४४, १८६ व्यक्तियों के पीछे एक प्रतिनिधि के हिसाब से, निश्चित की गयी थी। अन्य प्रान्तों के प्रतिनिधियों की संख्या का जनता से यही अनुपात रहता है; और उनकी कुल संख्या प्रत्येक मनुष्य-गणना के बाद होनेवाले निर्वाचन में बदलती रहती है। सन् १९३५ में 'कामन'-सभा के कुल सदस्य २४५ थे। कार्य संचालन के लिए 'स्पीकर' (अध्यक्ष) सहित कम-से-कम २० सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक होती है।

निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार

एक मात्र संघ-पार्लिमेंट को है:— व्यापार और वाणिज्य, सार्वजनिक ऋण, कर-निर्धारण, डाक, सेना और देश रक्षा, मुद्रा और टकसाल आदि। कृषि और आवास विदेशियों का इस राज्य में आना) आदि। कुछ विषयों का कानून बनाने का अधिकार संघ को भी है, और प्रान्तों को भी। संघ का बनाया कानून सब प्रान्तों में लागू होता है; और कोई प्रान्त इन विषयों के सम्बन्ध में उसी दशा में और उसी सीमा तक कानून बना सकता है, जबकि वह संघ के कानून से असंगत न हो।

गवर्नर-जनरल और प्रबन्धकारिणी सभा— चौदहवें परिच्छेद में बताया जा चुका है कि यहाँ के लिए गवर्नर-जनरल की नियुक्ति इंगलैंड के बादशाह द्वारा होती है। उसे अपने कार्य में प्रिवी-कौंसिल से सहायता मिलती है, जिसमें मंत्रिमंडल के सदस्य तथा कुछ अन्य व्यक्ति होते हैं। सन् १६३६ में जिस मंत्रिमंडल का संगठन हुआ, उसमें प्रधान मंत्री के अतिरिक्त १५ अन्य मंत्री थे। इनमें से एक विभागहीन मंत्री था, और शेष को भिन्न-भिन्न कार्य सौंपे हुए थे। मंत्री अपने शासन कार्य के लिए 'कामन'-सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

प्रान्तीय शासन—केनेडा के नौ प्रान्तों में से प्रत्येक में एक एक लेफ्टिनेन्ट-गवर्नर रहता है, जो इस राज्य के गवर्नर-जनरल द्वारा, प्रबन्धकारिणी सभा की सलाह से, नियुक्त किया जाता है। आठ प्रान्तों में एक-एक, और एक (क्यूबेक) में दो व्यवस्थापक सभाएँ हैं। प्रान्तीय मंत्री अपने शासन-कार्य के लिए प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा के प्रति उत्तरदायी रहते हैं। प्रान्तीय सरकार उन्हीं अधिकारों का उपयोग कर सकती हैं जो उसे केनेडा की केन्द्रीय सरकार द्वारा प्राप्त हों। इस राज्य के पश्चिमोत्तर प्रदेश और यूकोन प्रदेश का शासन कौंसिल-

युक्त कमिश्नर करते हैं।

निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार एक-मात्र प्रान्तीय व्यवस्थापक मंडलों को है:— प्रान्तीय शासनपद्धति का संशोधन (लेफ्टिनेन्ट-गवर्नर के पद के विषय को छोड़ कर), प्रान्तीय राजस्व, प्रान्तीय अधिकारियों की नियुक्ति और वेतन, प्रान्तीय न्यायालय, प्रान्त को सीमा के अन्दर की रेल, नहर, तार, सार्वजनिक भूमि की बिक्री, अस्पताल, आदि। गवनर-जनरल किसी प्रान्तीय कानून को रद्द कर सकता है, पर यह कार्य अपने मंत्रि-मंडल की सलाह से करता है।

विधान में संशोधन कैसे हो सकता है?—केनेडा के प्रांतों की शासनपद्धति के संशोधन का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। संघ की शासनपद्धति के विषय में संघ-पार्लिमेंट कोई संशोधन नहीं कर सकती। ऐसा संशोधन ब्रिटिश पार्लिमेंट ही करती है, (वह यह कार्य केनेडा की पार्लिमेंट तथा जनता की इच्छानुसार ही करती है)। विधान में इस प्रकार का प्रतिबन्ध होने का कारण यह है कि उसके बनाये जाने के समय यहाँ के केथलिक धर्मानुयायी फ्रांसीसियों को, अल्पसंख्यक होने के कारण, जातिगत आशंकाएं थीं। अतः केनेडा की पार्लिमेंट को विधान-संशोधन का अधिकार नहीं दिया गया।

(ख)

दक्षिण अफ्रीका का यूनियन

दक्षिण अफ्रीका के यूनियन के चार भाग हैं:—(१) केप-आफ-गुड-होप या उत्तम-आशा अंतरीप, (२) नेटाल, (३) ट्रांसवाल, और (४) आरेंज फ्री स्टेट। इन चारों का क्षेत्रफल पौने पांच लाख वर्ग मील, और जनसंख्या (सन् १९३६ की गणना के अनुसार)

छियानवे लाख है। राजधानी प्रीटोरिया है। दक्षिण अफ्रीका में कई अन्य प्रदेश भी हैं, और उनमें कुछ ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत भी हैं—यथा बसुटोलैंड, विचुआनालैंड, रोडेशिया और सुआजीलैंड। इनमें से कोई प्रदेश उक्त यूनियन में सम्मिलित नहीं है।

ऐतिहासिक परिचय—पन्द्रहवीं शताब्दी के अंत में योरप वालों को उत्तमाशा अन्तरीप का ज्ञान हुआ, तब से वे लोग दक्षिण अफ्रीका में जाने, और पीछे क्रमशः वहाँ बसने लगे। सन् १६५० में उत्तमाशा अन्तरीप के निकट, डच लोगों की एक बस्ती बनी थी। सन् १७९५ ई० में इस पर अंगरेजों का अधिकार होगया। डच लोग क्रमशः अफ्रीका के भीतरी हिस्सों में नये उपनिवेश बसाते गये। ये डच लोग बोअर कहलाते हैं। इनकी नयी जगहों में और विशेष कर डरबन में अंगरेज आ बसे, और अन्ततः १८४४ ई० में नेटाल अंगरेजी राज्य में मिला लिया गया। तब अधिकांश बोअर लोगों ने पीछे हट कर आरेन्ज फ्री स्टेट और ट्रांसवाल के प्रजातंत्र राज्य स्थापित किये, परन्तु इंगलैंड उन पर अधिकार करने का प्रयत्न करता रहा। अन्ततः ये दोनों राज्य क्रमशः १८४८ और १९०२ में अंगरेजों के अधीन होगये।

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका के चार उपनिवेश ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत हो गये। सन् १९०६ ई० में आरेन्ज फ्री स्टेट तथा ट्रांसवाल को स्वराज्य प्राप्त होगया, और तीन वर्ष बाद सन् १९०९ में अन्तरीप उपनिवेश, नेटाल तथा उक्त दोनों राज्यों का मिलाकर एक सम्मिलित राज्य स्थापित किया गया। इसका नाम 'दक्षिण अफ्रीका का यूनियन' हुआ।

शासनपद्धति—इस यूनियन की शासनपद्धति सन् १९०९

ई० के दक्षिण-अफ्रीका-कानून के अनुसार है। यह शासनपद्धति दक्षिण अफ्रीका वालों के बाद विवाद और तर्क-वितर्क से ही निश्चित हुई थी; ब्रिटिश पार्लिमेंट ने इसमें कुछ परिवर्तन किये बिना ही, इसे स्वीकार कर लिया था।

सन् १९०९ के बाद, समय-समय पर शासन-विधान में आवश्यकतानुसार संशोधन होते रहे हैं। संशोधन दक्षिण-अफ्रीका-यूनियन की पार्लिमेंट द्वारा ही किये जाते हैं। अन्तिम संशोधन सन् १९२७ में किया गया था।

यूनियन-पार्लिमेंट—यूनियन की पार्लिमेंट में दो सभाएँ हैं:—(१) सिनेट और (२) असेम्बली। इनके अधिवेशन केपटाउन में होते हैं। सिनेट में चालीस सदस्य होते हैं। इनमें से आठ सपरिषद गवर्नर-जनरल द्वारा नामजद किये जाते हैं; इन आठ सदस्यों में से चार विशेषतया इसलिए लिये जाते हैं कि उन्हें गैर-योरपियन जातियों की उचित आवश्यकताओं और इच्छाओं का ज्ञान हो। शेष ३२ सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तीय व्यवस्थापक मंडलों की संयुक्त सभा द्वारा होता है। प्रत्येक प्रान्त का व्यवस्थापक मंडल आठ-आठ सिनेटरों (सिनेट के सदस्यों) का चुनाव करता है। सिनेट की आयु दस वर्ष होती है। योरपियन ब्रिटिश प्रजा के व्यक्ति ही सदस्य होसकते हैं। सदस्य बनने के लिए उम्मेदवार कम-से-कम तीस वर्ष का होना चाहिए, उसमें किसी प्रान्त के निर्वाचक की योग्यता होनी चाहिए। उसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह दक्षिण-अफ्रीका के यूनियन में पांच वर्ष रहा हो, और उसके पास कम-से-कम पांच सौ पौंड की जायदाद हो। कोरम बारह सदस्यों का होता है।

सन् १९३६ के नेटिव-प्रतिनिधित्व कानून के अनुसार, यह व्यवस्था

की गयी है कि सिनेट में मूल निवासियों का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व होसके, और नेटिव प्रतिनिधि कौंसिल की स्थापना की जाय। इस व्यवस्था से चार सिनेटर चुने जाया करेंगे, प्रत्येक प्रान्त से एक-एक प्रतिनिधि होगा। इस प्रकार निर्वाचित सिनेटरों का कार्य-काल पाँच-पाँच वर्ष होगा। उनके निर्वाचित किये जाने के लिए उनमें उन्हीं योग्यताओं का होना आवश्यक है, जो अन्य निर्वाचित प्रतिनिधियों में होती है।

असेम्बली में, १९३६ की मनुष्य-गणना के सम्बन्ध में नियुक्त कमीशन की सिफारिश के अनुसार, १५० सदस्य हैं; प्रत्येक प्रान्त के सदस्यों की संख्या भिन्न-भिन्न है।* इक्कीस वर्ष से अधिक आयु के प्रत्येक व्यक्ति (पुरुष या स्त्री) को मताधिकार है। सदस्य योरपियन ब्रिटिश प्रजा के ही व्यक्ति हो सकते हैं, जिनमें निर्वाचक की योग्यता हो, और जो यूनियन में पांच वर्ष रहे हो। असेम्बली की आयु पांच वर्ष होती है। केप के नेटिव निर्वाचकों को असेम्बली के लिए तीन अतिरिक्त सदस्य चुनने का अधिकार है, ये सदस्य पांच वर्ष तक बने रहते हैं; चाहे इस बीच में असेम्बली भंग ही क्यों न होजाय। असेम्बली में कोरम तीस सदस्यों का होता है।

दोनों सभाओं के प्रत्येक सदस्य को राजभक्ति की शपथ लेनी पड़ती है। एक सभा का सदस्य, दूसरी सभा की सदस्यता के लिए निर्वाचित नहीं हो सकता। परन्तु मंत्री उस सभा में भी उपस्थित हो सकता तथा भाषण दे सकता है, जिसका वह सदस्य न हो; हाँ वह अपना मत उसी सभा में दे सकता है, जिसका वह सदस्य हो। निम्नलिखित बातें सदस्यता के लिए अयोग्यताएँ मानी जाती हैं:—(१) कोई ऐसा सरकारी पद ग्रहण करना, जिससे आय होती हो (इसमें कुछ अपवाद हैं), (२) दिवालिया होना, (३) घोर अपराध, और (४) पागलपन।

* उत्तमाशा अंतरीप ५९, नाटाल १६, ट्रांसवाल ६०, आरेंज फ्री स्टेट १५।

धन सम्बन्धी कानूनी मसविदे असेम्बली में ही आरम्भ होते हैं, सीनेट उनमें परिवर्तन नहीं कर सकती। यदि असेम्बली में कोई कानूनी मसविदा दो बार स्वीकृत होजाय और सिनेट उसे अस्वीकार करदे तो गवर्नर-जनरल उसे दोनों सभाओं के संयुक्त अधिवेशन में पेश करेगा और इसके निर्णय के अनुसार कानून बनेगा।

नेटिव प्रतिनिधि कौंसिल में २२ सदस्य होते हैं:— छः सरकारी; चार नामजद, जो गवर्नर-जनरल द्वारा नियुक्त हों; और बारह निर्वाचित, जिनमें से तीन-तीन सदस्य प्रत्येक प्रान्त के होंगे। इस कौंसिल का कार्य निम्नलिखित विषयों का विचार करना और उन पर अपनी सम्मति देना है :—(१) कोई प्रस्तावित कानून, जहाँ तक उसका सम्बन्ध नेटिव जनता से हो। (२) कोई विषय, जो मंत्री इस कौंसिल के पास भेजे। (३) कोई विषय, जिसका व्यापक रूप से नेटिव लोगों से सम्बन्ध हो।

गवर्नर-जनरल और प्रबन्धकारिणी सभा—यूनियन का गवर्नर-जनरल इंगलैंड के बादशाह द्वारा नियुक्त होता है। उसका वेतन यूनियन के कोष से दिया जाता है। वह प्रबन्धकारिणी सभा की सलाह से काम करता है। उसमें, सन् १९३९ में, प्रधान मंत्री सहित १३ मंत्री थे, जिनमें से एक मंत्री नेटिव जनता से सम्बन्धित विषयों के लिए था, और एक विभाग रहित। मंत्रियों की नियुक्ति गवर्नर-जनरल द्वारा, पार्लिमेंट के सदस्यों में से, होती है। प्रधान मंत्री को ३५०० पौंड और अन्य मन्त्रियों को २५०० पौंड वार्षिक वेतन मिलता है।

प्रान्तीय शासन—यूनियन के चारों प्रान्तों में एक-एक एडमिनिस्ट्रेटर (शासक), एक-एक व्यवस्थापक परिषद, तथा एक-एक

प्रबन्धकारिणी कमेटी होती है। प्रान्त का शासन एडमिनिस्ट्रेटर के नाम से होता है, उसे गवर्नरजनरल पांच वर्ष के लिए नियुक्त करता है। व्यवस्थापक परिषदों की आयु पांच-पांच वर्ष की होती है, वे अपना सभापति अपने सदस्यों में से निर्वाचित करती हैं। उनके सदस्यों की संख्या इस प्रकार है:—उत्तमाशा अन्तरीप ६१, नाटाल २५, ट्रांसवाल ४७, आरेंज फ्रीस्टेट २५। इन सदस्यों का निर्वाचन उसी पद्धति से होता है, जैसे पार्लिमेंट के सदस्यों का; परन्तु यह प्रतिबन्ध नहीं है कि वे योरपियन ही हों। केप के नेटिव निर्वाचकों को प्रान्तीय व्यवस्थापक परिषद के लिए दो सदस्य निर्वाचित करने का अधिकार है। प्रत्येक प्रान्तीय प्रबन्धकारिणी कमेटी में चार-चार मंत्री होते हैं, उसका सभापति एडमिनिस्ट्रेटर होता है। मंत्रियों का निर्वाचन व्यवस्थापक परिषदें करती हैं। यह आवश्यक नहीं है कि ये मंत्री अपने-अपने प्रान्त की व्यवस्थापक परिषद के सदस्य हों; उससे बाहर के भी व्यक्ति मंत्री चुने जा सकते हैं।

प्रान्तीय व्यवस्थापक परिषदें अपने क्षेत्र सम्बन्धी ऐसे ही आर्डिनेन्स बना सकती है, जो यूनियन-पार्लिमेंट के कानून से असंगत न हों। उनके आर्डिनेन्सों को गवर्नर-जनरल रद्द कर सकता है।

विधान में संशोधन कैसे हो सकता है?— यूनियन की पार्लिमेंट निर्धारित नियमों के अनुसार, विधान में संशोधन कर सकती है। संशोधन सम्बन्धी कानून का मसविदा पार्लिमेंट की दोनों सभाओं के संयुक्त अधिवेशन में पास होना चाहिए; उसके तीसरे वांचन के समय दोनों सभाओं के कुल सदस्यों में से कम-से-कम दो-तिहाई उससे सहमत होने चाहिएँ।

(ग)

आस्ट्रेलिया

आस्ट्रेलिया महाद्वीप अपने आकार में भारतवर्ष से भी बड़ा है। इसका क्षेत्रफल लगभग तीस लाख वर्गमील है। परन्तु इसका अधिकांश भाग गैरआबाद है, इसकी कुल जनसंख्या सन् १९३३की मनुष्यगणना के अनुसार सवा छासठ लाख थी। सन् १९३८ में यहाँ की जनता लगभग सत्तर लाख होने का अनुमान किया गया था। आस्ट्रेलिया छः प्रान्तों का मिलकर बना हुआ संघ है।

ऐतिहासिक परिचय—आस्ट्रेलिया के उत्तरी तट की खोज १६०६ में, सबसे प्रथम डच लोगों ने की थी। इस शताब्दी के अन्त में अंगरेज़ भी वहाँ गये। परन्तु सबने यही सूचित किया कि भूमि बंजर है, और मूल निवासी झगड़ालू हैं। अतः बहुत समय तक खोज का काम बन्द रहा। इस बीच में डच लोगों का सामुद्रिक प्रभुत्व जाता रहा। अन्त में केप्टेन कुक नामक अंगरेज १७६८ में वहाँ पूर्वी तट की ओर पहुँचा। उसने ख़बर दी कि यहाँ की भूमि उपजाऊ तथा बसाने योग्य है।

सन् १७८३ ई० में, अमरीका के संयुक्त-राज्य कहे जानेवाले भू-भाग ब्रिटिश साम्राज्य से पृथक् होगये थे। इस घटना से अंगरेजों का ध्यान आस्ट्रेलिया की ओर विशेष रूप से आकर्षित हुआ। बात यह थी कि अब तक कैदी या निर्वासित अंगरेज अमरीका भेज दिये जाते थे, पर अब वहाँ के लोगों ने उन्हें लेना अस्वीकार कर दिया। ये कैदी या निर्वासित व्यक्ति प्रायः वे लोग होते थे जो अपने स्वतंत्र धार्मिक या राजनैतिक विचारों के कारण अपराधी समझे जाते थे।

इन्हें रखने के लिए ब्रिटिश सरकार अब ऐसी भूमि चाहती थी, जो ऐसी उपजाऊ हो कि इन्हें खाद्य पदार्थ प्राप्त करने में कठिनाई न हो, तथा जो इतनी दूर हो कि ये वहाँ से जल्दी इंगलैंड न आसकें। ये दोनों बातें आस्ट्रेलिया में पूरी हो सकती थीं। अतः सन् १७८८ ई० में उक्त अपराधियों का जहाज़ यहाँ भेज दिया गया। इन्होंने इसे अपना देश समझा और ये उसकी उन्नति में लग गये। पीछे इनके आन्दोलन से, १८४० में इंगलैंड ने यहाँ अन्य अपराधियों को भेजना बन्द कर दिया। इस समय के लगभग, यहाँ सोने की खानें मिलजाने से देशोन्नति में बड़ी उत्तेजना हुई।

शासनपद्धति—क्रमशः आस्ट्रेलिया के औपनिवेशिकों ने उत्तरदायी शासन की माँग पेश की और उसके लिए आन्दोलन किया। पहले सन् १८५१ ई० न्यूसाउथवेल्स, विक्टोरिया, दक्षिण आस्ट्रेलिया, और टसमानिया ने, जो सुसंगठित होगये थे, मिलकर अपनी शासनपद्धति का मसविदा तैयार किया। ब्रिटिश पार्लिमेंट को इसे स्वीकार करना पड़ा। पीछे १८५९ में क्वीन्सलैंड को, और १८९० में पश्चिमी आस्ट्रेलिया को उत्तरदायी शासन दिया गया। पहले ये उपनिवेश आपस में सीमा आदि के लिए वादविवाद कर बैठते थे। अन्त में इन सबने एक संघ बना लिया और उसकी शासनपद्धति सन् १९०० ई० में ब्रिटिश पार्लिमेंट से स्वीकृत कराली। तब से यहाँ उक्त वर्ष के पार्लिमेंट के कानून के अनुसार, शासन होने लगा। उसके बाद समय-समय पर शासन-विधान में आवश्यकतानुसार संशोधन होते रहे हैं। संशोधन आस्ट्रेलिया की कामनवेल्थ की पार्लिमेंट के ही कानून द्वारा हुए हैं। विधान में इस बात की व्यवस्था है कि आस्ट्रेलिया के संघ में किसी नये प्रांत का समावेश या निर्माण

किया जा सके।

संघ-पार्लिमेंट—सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया (कामनवेल्थ) सम्बन्धी कानून बनाने का अधिकार संघ-पार्लिमेंट को है। इसमें इंगलैंड के बादशाह के प्रतिनिधि-स्वरूप गवर्नर-जनरल होता है। उसके अतिरिक्त, पार्लिमेंट में दो सभाएँ हैं :—(१) सिनेट, और (२) प्रतिनिधि-सभा (हाउस-आफ-रेप्रेज़ेंटेटिव्ज)। सिनेट में आस्ट्रेलिया के सब (छः) प्रान्तों में से प्रत्येक के छः-छः, इस प्रकार कुल छत्तीस सदस्य होते हैं, जो छः वर्ष के लिए चुने जाते हैं। प्रत्येक प्रान्त के प्रायः आधे सदस्यों का नया चुनाव प्रति तीसरे वर्ष होता है। सिनेट अपने सदस्यों में से एक को अपना सभापति निर्वाचित करती है। कोरम एक-तिहाई सदस्यों का होता है।

प्रतिनिधि-सभा में लगभग ७५ सदस्य होते हैं। आस्ट्रेलिया के प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधि, जनसंख्या के अनुपात से, लिये जाते हैं। जनसंख्या में अन्तिम मनुष्य-गणना का विचार किया जाता है, और मूल निवासियों का हिसाब नहीं लगाया जाता। जो प्रान्त प्रारम्भ से ही सम्मिलित हैं, उनमें से किसी के पाँच से कम प्रतिनिधि नहीं लिये जाते। प्रतिनिधि-सभा का नया संगठन प्रायः तीन साल बाद होता है। वह अपने एक सदस्य को सभापति चुनती है। कोरम एक-तिहाई सदस्यों का होता है।

पार्लिमेंट की दोनों सभाओं का प्रत्येक सदस्य जन्मजात ब्रिटिश प्रजा का व्यक्ति होना चाहिए, अथवा उसे ब्रिटिश संयुक्त-राज्य या आस्ट्रेलिया के किसी प्रान्त की नागरिकता प्राप्त किये कम-से-कम पाँच वर्ष का समय होजाना चाहिए। उसमें (वह पुरुष हो या स्त्री) बालिग होने के अतिरिक्त निर्वाचक होने की योग्यता होनी, और

उसका आस्ट्रेलिया में तीन साल निवास कर चुकना आवश्यक है। यदि पार्लिमेंट का कोई सदस्य आस्ट्रेलिया के किसी प्रान्त की पार्लिमेंट का सदस्य हो तो उसे संघ-पार्लिमेंट में भाग लेने से पूर्व वह सदस्यता छोड़ देनी चाहिए। मूल निवासियों (नेटिव) को छोड़कर शेष सब बालिग स्त्री पुरुषों को मताधिकार है।

धन सम्बन्धी कानूनी मसविदों पर विचार करने का कार्य प्रतिनिधि-सभा में ही हो सकता है, सिनेट में नहीं। सिनेट उसमें कोई संशोधन नहीं कर सकती। यदि प्रतिनिधि-सभा किसी कानूनी मसविदे को दो बार स्वीकार कर ले और सिनेट उसे अस्वीकार करे तो गवर्नर-जनरल दोनों सभाओं को भंग कर सकता है। यदि नये निर्वाचन के बाद फिर भी प्रतिनिधि-सभा उस मसविदे को स्वीकार करे और सिनेट अस्वीकार, तो दोनों सभाओं का संयुक्त अधिवेशन होता है, और उसके निर्णय के अनुसार काम होता है।

संघ-पार्लिमेंट को विशेषतया निम्नलिखित विषयों के कानून बनाने का अधिकार है:—व्यापार, जहाज चलाना, राजस्व, मुद्रा, बैंकिंग, रक्षा; विदेशों सम्बन्धी विषय, डाक, तार, मनुष्य-गणना, तोल, माप, रेल, ऐसे औद्योगिक विषयों के झगड़े निपटाना जिनका क्षेत्र एक प्रान्त की सीमा से बाहर हो, और देश-स्थिति-सूचक आंकड़े (स्टेटिस्टिक्स)। इन्हें छोड़कर, शेष सब विषयों के अपने-अपने क्षेत्र सम्बन्धी कानून बनाने का अधिकार प्रत्येक प्रान्त को है। अगर किसी प्रान्त का कोई कानून उस विषय के संघ-कानून से असंगत हो तो संघ-कानून मान्य होता है।

गवर्नर-जनरल और प्रबन्धकारिणी सभा— आस्ट्रेलिया का गवर्नर-जनरल इंगलैंड के बादशाह द्वारा नियुक्त होता

है। वह प्रबन्धकारिणी सभा की सलाह से काम करता है, जिसमें प्रायः सात से ग्यारह तक मंत्री होते हैं। मंत्री प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों में से लिये जाते हैं, और उस सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

प्रान्तीय शासन—आस्ट्रेलिया में छः प्रान्त हैं। प्रत्येक प्रान्त में बादशाह द्वारा नियुक्त एक गवर्नर रहता है, जो गवर्नर-जनरल के अधीन नहीं होता। क्वीन्सलैण्ड में एक ही व्यवस्थापक सभा है, इसे छोड़कर अन्य प्रान्तों में दो-दो व्यवस्थापक सभाएँ हैं, जिन्हें अपने-अपने प्रान्त के लिए कानून बनाने तथा कर निर्धारित करने का अधिकार है। मताधिकार प्रत्येक बालिग स्त्री पुरुष को है।

इस शासनपद्धति की विशेषताएँ—यहाँ की शासन-पद्धति की मुख्य-मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:—

१—पार्लिमेंट की दोनों सभाओं के निर्वाचन के लिए प्रत्येक बालिग पुरुष स्त्री को मताधिकार है।

२—प्रान्तों के गवर्नर ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते हैं, और वे उससे सीधा सम्बन्ध रखते हैं।

३—संघ-सरकार को वे ही अधिकार प्राप्त हैं, जो उसे कानून द्वारा दिये गये हैं, शेष सब अधिकार प्रान्तीय सरकारों को प्राप्त हैं।

४—प्रबन्धकारिणी सभा पूर्णतः प्रतिनिधि-सभा के प्रति उत्तर-दायी है।

५—शासनपद्धति यहाँ की पार्लिमेंट का बहुमत अथवा प्रति-निधि-सभा का अत्यधिक बहुमत होने पर निर्वाचकों द्वारा सुगमता पूर्वक बदली जा सकती है।

विधान में परिवर्तन कैसे हो सकता है?—विधान-परिवर्तन सम्बन्धी कानूनी मसविदा पार्लिमेंट की दोनों सभाओं

में स्पष्ट बहुमत से पास होना चाहिए। दोनों सभाओं द्वारा पास होने के कम-से-कम दो, और अधिक-से-अधिक छः माह बाद उस पर प्रत्येक प्रान्त के निर्वाचकों के मत लिये जायँगे। यदि उपर्युक्त मसविदे को कोई सभा दो बार स्वीकार कर ले और दूसरी सभा उसे अस्वीकार करे तो भी गवर्नर-जनरल उस मसविदे के सम्बन्ध में प्रत्येक प्रान्त के निर्वाचकों का मत ले सकता है। यदि अधिकांश प्रान्तों में निर्वाचकों का स्पष्ट बहुमत उस मसविदे के पक्ष में हो, और मत देनेवाले समस्त निर्वाचकों का भी बहुमत उसके पक्ष में हो तो गवर्नर-जनरल उसपर बादशाह की स्वीकृति ले लेता है, और वह कानून बन जाता है।

(घ)

न्यूजीलैंड

इसमें दो द्वीप सम्मिलित हैं; उत्तरी द्वीप और दक्षिणी द्वीप। यह आस्ट्रेलिया के दक्षिण-पश्चिम में है। इसका क्षेत्रफल एक लाख वर्ग मील अधिक से है। मनुष्यगणना प्रति पांचवें वर्ष होती है। सन् १९३६ की गणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या १५ लाख है। मूल निवासी 'माओरी' कहलाते हैं।

ऐतिहासिक परिचय—योरपवालों को न्यूजीलैण्ड का पता सन् १६४२ में लगा था। इसके किनारे की विशेष खोज कप्तान कुक ने सन् १७६९ में की। सन् १८३० ई० में यहाँ औपनिवेशिक अच्छी संख्या में आगये। ये उत्तरी द्वीप में बस गये। १८३९ में फ्रांस वालों ने इस भूमि पर अधिकार करना चाहा, पर अंगरेज़ों ने बाजी मारली। ठीक तरह बस जाने पर, औपनिवेशिकों ने स्वायत्त-शासन की माँग उपस्थित की। ब्रिटिश पार्लिमेंट ने सन् १८५२ में यहाँ पार्लिमेंट

स्थापित करने का कानून बनाया, और पीछे इस कानून में समय-समय पर संशोधन किया। आस्ट्रेलिया की भूमि से बहुत फासले पर स्थित होने के कारण, इस उपनिवेश ने उसके संघ में सम्मिलित होना पसन्द नहीं किया, और अपनी शासनपद्धति पृथक् तथा स्वतंत्र रखी। सन् १९०८ से न्यूजीलैंड की पार्लिमेंट स्वयं ही यहाँ के शासन-विधान में संशोधन करती है। विधान में ऐसी व्यवस्था की गयी है कि मूल निवासियों सम्बन्धी शासन-प्रबन्ध में, तथा उनके पारस्परिक व्यवहार में, उनके नियम तथा रीति-रिवाज का ध्यान रखा जाय, जहाँ तक कि वे मानवता के साधारण सिद्धान्तों से असंगत न हों; और, कुछ ऐसे ज़िले अलग रखे जायँ, जहाँ उनके नियम तथा रीति रिवाज का पालन हो।

पार्लिमेंट—यहाँ की पार्लिमेंट ('जनरल असेम्बली') में दो सभाएँ हैं:—(१) व्यवस्थापक परिषद अर्थात् 'लेजिस्लेटिव कौंसिल, और (२) प्रतिनिधि-सभा अर्थात् 'हाउस-आफ-रेप्रेजेंटेटिव्स'। व्यवस्थापक परिषद के सदस्य ४३ तक होते हैं, जिनमें से माओरी जाति के ३ सदस्य गवर्नर-जनरल द्वारा नियुक्त होते हैं, और शेष सदस्य प्रति सातवें वर्ष निर्वाचित होते हैं। उम्मेदवार बनने के लिए किसी जायदाद का रखना आवश्यक नहीं है।

प्रतिनिधि-सभा में ८० सदस्य होते हैं, जो सर्वसाधारण द्वारा तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं। इनमें से चार माओरी सदस्य होते हैं। सन् १९१९ से स्त्रियाँ भी सदस्य हो सकती हैं।

प्रत्येक पुरुष और स्त्री, जिसका नाम निर्वाचक-सूची में दर्ज हो, सदस्य बन सकती है। योरपियन सदस्यों के निर्वाचन के लिए वे व्यक्ति मतदाता होते हैं, जो विदेशी न हों, एक साल तक न्यूजीलैंड

में और तीन महीने निर्वाचन-जिले में रहे हों। कोई व्यक्ति एक से अधिक निर्वाचक-सूचियों में अपना नाम दर्ज नहीं करा सकता। माओरियों के चारों निर्वाचन-जिलों में प्रत्येक बालिग माओरी मत दे सकता है। स्त्रियों को मताधिकार सन् १८९३ में मिला।

यदि गवर्नर-जनरल किसी विषय का कानून बनवाना चाहता है, तो वह उसका मसविदा पार्लिमेंट की किसी सभा में भेज सकता है। इस पर नियमानुसार विचार किया जायगा। जब पार्लिमेंट की दोनों सभाओं में किसी कानूनी मसविदे के सम्बन्ध में मतभेद होता है, तो गवर्नर-जनरल द्वारा दोनों सभाओं का संयुक्त अधिवेशन किया जाता है।

गवर्नर-जनरल को अधिकार है कि वह पार्लिमेंट द्वारा पास किये हुए किसी कानूनी मसविदे को बादशाह की ओर से स्वीकार करे या अस्वीकार करे, अथवा उसे बादशाह की स्वीकृति के लिए रख छोड़े। वह उस मसविदे में आवश्यक संशोधन करके उसे पुनः पार्लिमेंट की सभाओं के विचारार्थ भेज सकता है। ऐसा होने की दशा में सभाएँ उस पर नियमानुसार विचार करेंगी। बादशाह की स्वीकृति के लिए रख छोड़ा हुआ कानूनी मसविदा उसकी स्वीकृति प्राप्त होने तक अमल में नहीं आयेगा। बादशाह उसे दो साल तक अस्वीकार कर सकता है।

गवर्नर-जनरल और प्रबन्धकारिणी सभा—यहाँ का गवर्नरजनरल बादशाह द्वारा नियुक्त होता है, और साधारणतया प्रबन्धकारिणी सभा की सलाह से काम करता है। वह बादशाह का ही नहीं, ब्रिटिश सरकार का भी प्रतिनिधि होता है। उसका संयुक्त पद गवर्नरजनरल और कमांडरन-चीफ है। प्रबन्धकारिणी सभा में १२ मन्त्री होते हैं, जो अपने शासन-कार्य के लिए व्यवस्थापक सभा के प्रति

उत्तरदायी होते हैं।

सन् १८७५ ई० से प्रान्त तथा प्रान्तीय शासन व्यवस्था हटा दी गयी, और प्रान्तीय अधिकारियों का कार्य गवर्नर को सौंपा गया, जो सन् १९१७ से गवर्नर-जनरल कहा जाने लगा।

(च)

न्यूफाउंडलैंड

यह उपनिवेश केनेडा के पूर्व में, एक छोटा-सा टापू है। इसका क्षेत्रफल ४२ हजार वर्गमील और जनसंख्या लगभग तीन लाख है। योरपवालों में, सब से पहले इस का पता जोन केबट ने सन् १४९७ में लगाया था। इस उपनिवेश का ऐतिहासिक परिचय केनेडा के प्रसंग में दे दिया गया है। यह केनेडा के संघ में सम्मिलित होने में सहमत नहीं हुआ। यह उससे पृथक् ही है।

शासनपद्धति; सन् १९३४ से पूर्व—फरवरी १९३४ से पूर्व यहाँ पार्लिमेंट में दो सभाएँ थीं:—(१) व्यवस्थापक परिषद (लेजिस्लेटिव कौंसिल), और (२) व्यवस्थापक सभा (असेम्बली)। व्यवस्थापक परिषद में २४ से अधिक सदस्य नहीं होते थे। उनकी नियुक्ति गवर्नर द्वारा की जाती थी। व्यवस्थापक सभा में २७ निर्वाचित सदस्य होते थे। स्त्रियों को सन् १९२५ से मताधिकार था। यहाँ का गवर्नर इंगलैंड के बादशाह द्वारा नियुक्त होता था। वह प्रबन्धकारिणी सभा की सलाह से काम करता था, जिसमें बारह से अधिक मंत्री नहीं होते थे।

वर्तमान शासनपद्धति—सन् १९३३ में एक शाही कमीशन इस लिए नियुक्त किया गया कि न्यूफाउन्डलैंड की आर्थिक स्थिति की जाँच करके इस उपनिवेश की भावी व्यवस्था के सम्बन्ध में अपनी

सम्मति सूचित करे। उस कमीशन ने यह सिफारिश की कि यहाँ के तत्कालीन व्यवस्थापक मंडल तथा प्रबन्धकारिणी को स्थगित किया जाय, और जब तक यह उपनिवेश पुनः स्वावलम्बी न होजाय, यहाँ की शासन और व्यवस्था का पूर्ण अधिकार एक गवर्नर को रहे, जो एक कमीशन की सलाह से कार्य करे। कमीशन में छः सदस्य रहें, जिनमें से तीन न्यूफाउन्डलैंड के हों, और तीन ब्रिटिश संयुक्त-राज्य के। कमीशन का सभापति गवर्नर हुआ करे। कमीशन-युक्त गवर्नर स्वराज्य-प्राप्त उपनिवेशों से सम्बन्धित ब्रिटिश मंत्री के प्रति उत्तरदायी रहे। इस उपनिवेश के पुनर्निमाण-काल में राजस्व का साधारण उत्तरदायित्व ब्रिटिश सरकार पर होगा। इन सिफारिशों के अनुसार, दिसम्बर सन् १९३३ ई० से इस उपनिवेश की तत्कालीन शासनपद्धति स्थगित की जाकर, नयी व्यवस्था की गयी।

× × ×

उत्तरदायी शासनपद्धति—ब्रिटिश साम्राज्य के स्वराज्य-प्राप्त प्रदेशों की शासनपद्धति का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। भिन्न-भिन्न भागों की शासनपद्धतियों में कुछ-कुछ बातों में भेद है, परन्तु कई समानताएँ भी हैं; यथा प्रत्येक प्रदेश में दो-दो व्यवस्थापक सभाएँ हैं, जिन्हें प्राय: सिनेट और प्रतिनिधि-सभा कहा जाता है। धन सम्बन्धी कानूनी मसविदों के विषय में प्रायः पूर्णाधिकार प्रतिनिधि-सभा को ही होता है। मंत्रिमंडल भी इसी सभा के प्रति उत्तरदायी होता है। प्रत्येक प्रदेश में उत्तरदायी शासनपद्धति प्रचलित है, उसकी मुख्य-मुख्य बातें ये हैं—

(१) शासन सम्बन्धी सब कार्य प्रधान शासक के नाम से किये जाते हैं। वह व्यवस्थापक मंडल के प्रति उत्तरदाता नहीं होता,

इसलिए वह उसके द्वारा हटाया भी नहीं जा सकता। इसे गवर्नर-जनरल, या गवर्नर कहते हैं।

(२) उसके कार्य मंत्रियों के परामर्श से, और उन्हीं के उत्तरदायित्व पर होते हैं। मंत्री नाममात्र से उसके द्वारा, परन्तु वास्तव में प्रजा-प्रतिनिधियों द्वारा; साधारणतः व्यवस्थापक मंडल के सदस्यों में से, चुने जाते हैं।

(३) इस प्रकार प्रतिनिधि, अपने निर्वाचित मंत्रियों द्वारा, देश का वास्तविक शासन करनेवाले होते हैं।

(४) जब प्रतिनिधि-सभा का इन मन्त्रियों पर विश्वास नहीं रहता, ये (यदि व्यवस्थापक मण्डल को बर्खास्त न करें) त्यागपत्र दे देते हैं, और उनके स्थान पर नये मन्त्री चुने जाते हैं।

(५) प्रबन्धक और व्यवस्थापक शक्ति उस दल के हाथ में होती है, जिसका प्रतिनिधि-सभा में बहुमत हो।

(६) व्यवस्थापक मण्डल और मन्त्रिमण्डल अपनी विवाद-ग्रस्त बातों को, न्याय-विभाग के सन्मुख रखे बिना ही, तय कर लेते हैं।

संघ-शासनपद्धति—भिन्न-भिन्न भागों के शासन सम्बन्धी अधिकारों के विचार से, केनेडा और आस्ट्रेलिया में जो शासनपद्धति प्रचलित है उसे संघ ('फिडरल') शासनपद्धति कहते हैं। दक्षिण अफ्रीका के यूनियन की शासनपद्धति के भी कुछ लक्षण इसी से मिलते हैं। संघ-शासन वाले राज्य में समग्र शासन-सत्ता एक केन्द्रीय सरकार के अधीन नहीं होती, वरन् एक लिखित विधान के अनुसार, केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों में विभक्त होती है। व्यापार, युद्ध, सिक्का आदि जिन बातों का सम्बन्ध समस्त राज्य से हो, उनके विषय में नियम बनाने का अधिकार केन्द्रीय व्यवस्थापक मंडल को होता है

तथा उनको अमल में लाने का काम केन्द्रीय सरकार करती है। प्रान्तीय सरकारें अपने-अपने प्रान्त के विषयों में उदाहरणवत् धर्म, शिक्षा, उद्योग-धन्धों आदि के सम्बन्ध में—स्वाधीन रहती हैं। कुछ विषय ऐसे भी होते हैं जिनके सम्बन्ध में अधिकार केन्द्रीय एवं प्रान्तीय दोनों सरकारों को होते हैं। इन सरकारों के अधिकारों की सीमा का निर्णय करने के लिए एक प्रधान न्यायालय रहता है, जिसे संघ-न्यायालय कहा जाता है। संघ विधान संघ में सम्मिलित होनेवाले राज्यों का एक प्रकार से संधिपत्र होता है, जिसके अनुसार वे अपने कुछ अधिकारों को अपने अधीन रखते हैं और कुछ को केन्द्रीय सत्ता के सुपुर्द कर देते हैं।

इसके विपरीत, एकात्मक ('यूनीटरी') शासनपद्धति वाले राज्यों में सब शासन सत्ता केन्द्रीय सरकार के अधीन होती है। यदि वह उचित समझे तो वह अपने कुछ अधिकार प्रान्तीय सरकारों को दे सकती हैं। केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय सरकारों के अधिकार घटाने-बढ़ाने, एवं उनकी संख्या या सीमा में भी परिवर्तन करने का अधिकार होता है। ग्रेट-ब्रिटेन आदि देशों में यह पद्धति प्रचलित है।

सतरहवाँ परिच्छेद

उपनिवेश-विभाग के अधीन भू-भाग

"ब्रिटेन के बाहर साम्राज्य के जिन भागों में गोरे बसते हैं, वे एक प्रकार से स्वतन्त्र राज्य ही हैं। इनपर नाममात्र के लिए ब्रिटिश नरेश की प्रभुता है; परन्तु जिन भागों में उनका सचमुच साम्राज्य है, उनमें

अनगोरों की बस्ती है। इसलिए सच पूछा जाय तो अनगोरी जातियाँ ही छोटे-से ब्रिटिश टापू को करोड़ों आदमियों का प्रभु बना रही हैं।"

— स्वतन्त्र

इस परिच्छेद में साम्राज्यान्तर्गत उन भागों की शासनपद्धति का विचार किया जायगा जो ब्रिटिश सरकार के उपनिवेश विभाग के अधीन हैं। यद्यपि इनमें सीलोन (लंका) आदि कुछ भाग ऐसे हैं, जो वास्तव में उपनिवेश नहीं हैं, इन सबको प्रायः उपनिवेश कहा जाता है।

ये उपनिवेश भू-मंडल भर में बिखरे हुए, अनेक छोटे-बड़े टापू या अन्य ऐसे भाग हैं, जिनके अधिकतर निवासी असंगठित ग़ैर-योरपियन हैं तथा असभ्य माने जाते हैं। ये गत तीन शताब्दियों में, भिन्न-भिन्न समय में, अंगरेजों के अधिकार में आये। इनमें से बहुत-सों में अंगरेज पहले व्यापार करने के उद्देश्य से गये थे। कुछ उपनिवेश युद्ध तथा सन्धियों से भी मिले हैं।

अफ्रीका और अमरीका के निकटवर्ती अथवा अन्तर्गत उपनिवेशों में से अधिकतर की जल-वायु अंगरेजों के अनुकूल न होने से, इनमें अधिक जनसंख्या इनके मूल निवासियों की ही है। जिन स्थानों की जल-वायु औपनिवेशिकों के अनुकूल है, उनमें इनकी संख्या खूब बढ़ी, तथा बढ़ रही है। किसी-किसी की पैदावार अच्छी है, और अंगरेज उससे, तथा उपनिवेश के मूल निवासियों की सस्ती मजदूरी से, खूब लाभ उठाते हैं। अदन और जिबरालटर आदि कुछ उपनिवेश अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण ही विशेष महत्व के हैं।

दो श्रेणियाँ—ब्रिटिश सरकार के प्रति इन उपनिवेशों की अधीनता भिन्न-भिन्न परिमाण में है, तथापि शासनपद्धति के दृष्टि से,

हम इन उपनिवेशों को दो श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं—पहली श्रेणी उन उपनिवेशों की है जिनमें उत्तरदायी शासनपद्धति आरम्भ हो गयी है; ये दक्षिणी रोडेशिया, मालटा और लंका हैं। दूसरी श्रेणी में वे अनेक उपनिवेश हैं, जिनमें उत्तरदायी शासनपद्धति नहीं है। इन्हें राजकीय उपनिवेश (क्राउन कालोनी) कहा जाता है।* इसका कारण यह है कि प्रायः इनमें बादशाह के 'आर्डर-इन-कौंसिल' द्वारा बनाये हुए कानूनों का व्यवहार होता है।

उत्तरदायी शासनपद्धति वाले उपनिवेश—

(१) दक्षिणी रोडेसिया—यह दक्षिण अफ्रीका में है। इसका क्षेत्रफल डेढ़लाख वर्गमील और जनसंख्या सन् १९३६ की मनुष्य-गणना के अनुसार तेरह लाख है, जिनमें योरपियन केवल ५५ हजार हैं। यह सन् १९२३ तक ब्रिटिश-दक्षिण-अफ्रीका-कम्पनी के अधीन था। उस वर्ष यह नियमानुसार ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत किया गया। यहाँ प्रायः सब आन्तरिक विषयों में उत्तरदायी शासन-पद्धति है; हाँ, मूल निवासियों के सम्बन्ध में कुछ प्रतिबन्ध है। शासन-कार्य गवर्नर और प्रबन्धकारिणी सभा द्वारा होता है। यहाँ कानून बनाने के लिए व्यवस्थापक सभा (असेम्बली) है। इसमें तीस सदस्य हैं। इसका कार्यकाल पाँच वर्ष है। सन् १९२८ ई० से मताधिकार २१ वर्ष से अधिक आयु के, निर्धारित योग्यता वाले, ब्रिटिश प्रजाजनों को है।

(२) मालटा—यह द्वीप भूमध्य सागर में है। इसका क्षेत्रफल ९५ वर्गमील और निकटवर्ती द्वीपों को मिला कर १२२ वर्गमील है। यहाँ की जनसंख्या सन् १९३८ में लगभग पौने तीन लाख थी।

*ए० बी० कीथ रचित 'गवर्नमेंट्स-आफ-दि-ब्रिटिश-एम्पायर के आधार पर।

सन् १९३३ से आन्तरिक विषयों में उत्तरदायी शासन है। गवर्नर एक कौंसिल द्वारा शासन करता है।

(३) लंका—अति प्राचीन काल से यह भारतवर्ष से घनिष्ट सम्बन्धित रहा है। दोनों की संस्कृति, धर्म, रीति-रिवाज आदि में बहुत समानता है। यहाँ के अधिकांश निवासी बौद्ध धर्मानुयायी हैं। यहाँ की भूमि की पैदावार बढ़ाने में दक्षिण-भारतवालों का बड़ा भाग रहा है। योरप निवासियों में सर्व प्रथम पुर्तगालवालों ने सन् १५०५ में इसका पता लगाया। अगली शताब्दी के मध्य में इसे हालैंड वालों ने ले लिया। अठारहवीं शताब्दी में यहाँ अंगरेजों का अधिकार हुआ। सन् १७९६ में यह मदरास प्रान्त की सरकार के अधीन किया गया था। पीछे सन् १८०२ में इसे भारतवर्ष से पृथक् करके एक उपनिवेश बना दिया गया। इसका क्षेत्रफल २५,३३२ वर्गमील, और जनसंख्या लगभग साठ लाख है।

अंगरेजी शासन के आरम्भ में लंका का शासन एक राजकीय उपनिवेश की भांति था। सन् १९१४-१८ के योरपीय महायुद्ध के समय भारतवर्ष की भांति यहाँ भी शासन-सुधार का आन्दोलन हुआ। यहाँ की नेशनल कांग्रेस तथा अन्य संस्थाओं के प्रयत्न से सन् १९२३ में यहाँ व्यवस्थापक सभा में निर्वाचित सदस्यों की अधिकता होने लगी, यद्यपि कानून बनाने और शासन सम्बन्धी सर्वोच्च अधिकार गवर्नर को ही रहा। पीछे लार्ड डोनोमोर की अधीनता में नियुक्त कमीशन द्वारा जाँच होने पर सन् १९३१ में शासनपद्धति में परिवर्तन हुआ।

कानून बनाने के लिए यहाँ एक व्यवस्थापक संस्था है, जिसे स्टेट कौंसिल (राज्य-परिषद) कहते हैं। इसमें पचास सदस्य निर्वाचित होते हैं, और आठ नामजद। इनके अतिरिक्त इसमें तीन

राज्याधिकारी भी बैठते हैं :—चीफ सेक्रेटरी, लीगल सेक्रेटरी, और फाइनेन्शल (राजस्व) सेक्रेटरी।

यह परिषद सात कमेटियों का चुनाव करती है, प्रत्येक कमेटी को निर्धारित शासन-कार्य सौंपा जाता है। राज्य-प्रबन्ध सम्बन्धी अन्य कार्य-रक्षा, बाहरी सम्बन्ध, सार्वजनिक शान्ति, निर्वाचन, राजस्व आदि—राज्याधिकारियों द्वारा नियंत्रित रहते हैं। उपर्युक्त कमेटियाँ अपना-अपना सभापति स्वयं चुनती हैं; ये सभापति गवर्नर द्वारा, निर्धारित विभाग के, मंत्री नामजद किये जाते हैं। राज्यपरिषद के सदस्यों के चुनाव के लिए निर्धारित योग्यता वाली प्रत्येक बालिग स्त्री तथा पुरुष को मताधिकार है। सदस्यों के लिए अंगरेजी भाषा में बोलने, पढ़ने और लिखने की भी योग्यता का होना आवश्यक है।

गवर्नर को अधिकार है कि वह चाहे जिस विभाग का प्रबन्ध अपने हाथ में ले ले। उसे कानून बनाने का भी बहुत अधिकार है। वह राज्य-परिषद द्वारा पास किये हुए कानूनी मसविदे को अस्वीकार कर सकता है, और किसी मसविदे के सम्बन्ध में यह भी माँग कर सकता है कि गवर्नर की स्वीकृति के लिए उपस्थित किये जाने से पूर्व वह मसविदा परिषद के दो-तिहाई सदस्यों द्वारा पास किया जाना आवश्यक है।

बादशाह को अधिकार है कि आर्डर-इन-कौंसिल के द्वारा शासन-पद्धति में परिवर्तन करे, या कोई नया कानून बनाये। राज्यपरिषद ने इसका विरोध किया है। उसकी माँग यह भी है कि राज्याधिकारियों का कानून बनाने में भाग न रहे, गवर्नर के विशेषाधिकार हटा दिये जायँ, और राजस्व सम्बन्धी पूर्णाधिकार कौंसिल के हाथ में रहे।

सीलोन नौ प्रान्तों में विभक्त है। प्रत्येक प्रान्त के शासन-प्रबन्ध के लिए एक-एक सरकारी एजंट रहता है, उसकी सहायता के लिए सहायक और अधीन कर्मचारी होते हैं।

राजकीय उपनिवेश——इन उपनिवेशों के कई भेद हैं—(क) ऐसे उपनिवेश जिनमें व्यवस्थापक सभा (असेम्बली) निर्वाचित सदस्यों की, और व्यवस्थापक परिषद (कौंसिल) नामजद सदस्यों की है; इस प्रकार शासनपद्धति प्रतिनिधि-मूलक है; यथा, बहामा, बरवेडोस, और बरमूडा (अमरीका)

(ख) ऐसे उपनिवेश जिनकी व्यवस्थापक परिषदें अंशत निर्वाचित हैं, जिनके संगठन में सरकारी सदस्यों के बहुमत होने की व्यवस्था नहीं है; यथा ब्रिटिश गायना (दक्षिण अमरीका); और साइप्रस (एशिया)।

(ग) ऐसे उपनिवेश जिनकी व्यवस्थापक परिषदें अंशतः निर्वाचित हैं, जिनके संगठन में सरकारी सदस्यों के बहुमत की व्यवस्था है; यथा मारीशस (अफ्रीका); स्ट्रेट सेटलमेंट (पिनांग, मलाका, सिंगापुर और लबुआन) फिजी (आस्ट्रेलिया); लीवर्ड द्वीप, ट्रिनिडाड और विंडवर्ड (अमरीका); सीरालोयन, गोल्डकोस्ट, नाइजीरिया, और केनिया (अफ्रीका)।

(घ) ऐसे उपनिवेश जिनकी व्यवस्थापक परिषदों के सदस्य नामजद हैं; यथा ब्रिटिश होंडूरास और फाकलंड द्वीप (अमरीका); गेम्बिया (अफ्रीका); हांकांग (एशिया); सेशलीज (अफ्रीका)।

(च) ऐसे उपनिवेश जिनमें व्यवस्थापक परिषदें नहीं हैं; केवल बादशाह को ही कानून बनाने का अधिकार है, और वह इस अधिकार का उपयोग इन उपनिवेशों में रहने वाले गवर्नरों या हाईकमिश्नरों

द्वारा करता है; यथा जिब्रालटर (योरप); सेंटहेलिना, बसूटोलैंड, अशान्टी, (अफ्रीका); जिलवर्ट और ऐलिस द्वीप (आस्ट्रेलिया)।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है; प्रायः इन सब उपनिवेशों के लिए बादशाह अपने आर्डर-इन-कौंसिल द्वारा आवश्यक कानून बना सकता है। इनमें से अधिकांश में शासन-प्रबन्ध के लिए गवर्नर और उसकी प्रबन्धकारिणी कौंसिलें हैं। गवर्नरों को बादशाह ब्रिटिश उपनिवेश-मंत्री के परामर्श के अनुसार नियत करता है। उन्हें शासन सम्बन्धी सब आवश्यक अधिकार होते हैं, परन्तु वे इन अधिकारों का उपयोग उन लिखित हिदायतों के अनुसार ही कर सकते हैं जो उन्हें, नियुक्ति के समय बादशाह द्वारा, दी जाती हैं अथवा जो उन्हें समय-समय पर उपनिवेश-मन्त्री द्वारा मिलती रहती हैं। गवर्नर को शासन-कार्य में सहायता देने के लिए प्रबन्धकारिणी सभा भी रहती है, परन्तु वह इसके बहुमत की अवहेलना कर सकता है। गवर्नर का कर्तव्य है कि अपने उपनिवेश के भिन्न-भिन्न विभागों के संचालन सम्बन्धी सब महत्वपूर्ण विषयों पर स्वयं समुचित ध्यान दे। रेलें निकालने और बन्दरगाह बनवाने आदि के ऐसे कार्यों की ओर भी उसका बहुत ध्यान रहता है, जिनमें बड़ा खर्च करना होता है।

पहले कहा जा चुका है कि स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों में हिन्दुस्तानियों के लिए प्रायः दरवाजा बन्द है। पर औपनिवेशिक विभाग से सम्बद्ध अनेक उपनिवेश हिन्दुस्तानियों को माँग रहे हैं। हाँ, माँग रहे हैं, अपने स्वार्थ के लिए। ये उपनिवेश गृहस्थी, पूँजीवाले या उच्च स्थिति के हिन्दुस्तानी नहीं चाहते। ये चाहते हैं कि कुली हिन्दुस्तानी वहाँ जावें। इन उपनिवेशों में हिन्दुस्तानियों के लिए 'कुली' शब्द का व्यवहार किया जाता है, उनसे मनुष्योचित व्यवहार नहीं किया जाता। उनकी अवस्था बहुत शोचनीय है।

स्वराज्य प्राप्त उपनिवेशों के विषय में ब्रिटिश सरकार यह कह सकती है कि उन्हें अपनी नीति निर्धारित करने की स्वतंत्रता है; परन्तु औपनिवेशिक विभाग के अधीन उपनिवेशों के विषय में तो यह भी नहीं कहा जासकता। वहाँ भारतवासियों को जो कष्ट है, उसका पूरा दायित्व ब्रिटिश सरकार पर है। क्या वह अपना समुचित कर्तव्य पालन करेगी?

विशेष वक्तव्य—बहुत समय से अन्य साम्राज्यों की भांति ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन भागों की जनता अपने जन्मसिद्ध अधिकार—स्वराज्य—से वंचित है। पिछले योरपीय महायुद्ध (१९१४-१८) में भयंकर नर-संहार होने के बाद जब स्वभाग्य-निर्णय, छोटे राज्यों की स्वाधीनता और आत्म-निर्णय आदि की ध्वनि सुनायी दी तो मानव हृदय ने ठंडी साँस ली। यह सोच कर बहुत संतोष किया गया था कि अब नवयुग आने वाला है, प्रत्येक प्रदेश की पराधीनता की बेड़ियाँ कट जायँगी। परन्तु प्रतीक्षा करते-करते तीन दशाब्दियाँ व्यतीत होगयीं, संसार की राजनीति या कूटनीति वैसी ही बनी रही। इसी का परिणाम अब दूसरे महायुद्ध के रूप में सब के सामने है—जो पहले से अधिक विकराल है, जिसमें विज्ञान के और भी अधिक उन्नत साधनों से जनधन की हानि हो रही है। जब तक संसार के प्रत्येक भाग को स्वाधीनता का उपभोग नहीं करने दिया जायगा, जब तक वर्तमान उपनिवेश-नीति का अन्त नहीं किया जायगा, और जब तक प्रत्येक छोटे-बड़े उपनिवेश को स्वराज्य-प्राप्त प्रदेश का पद नहीं मिलेगा, संसार में शान्ति की पुकार केवल मृग तृष्णा और मायाजाल रहेगी। महायुद्ध के बाद संसार का सुन्दर निर्माण समानता, स्वतंत्रता और सहयोग के आधार पर ही होना सम्भव है।